

ईश्वर आप कौन है

स्वर्गीय पिता के हृदय में एक यात्रा

एनोक खंडागळे

परमेश्वर, आप कौन हैं?

हमारे स्वर्गीय पिता के हृदय की यात्रा

जनवरी २०२६

एनोक विनोद खंडागले

विषय-सूची

विषय-सूची.....	4
अध्याय १ - ईश्वर के बारे में चार बातें.....	6
अध्याय २ - ईश्वर = प्रेम.....	9
अध्याय ३ - ईश्वर धैर्यवान और कृपालु हैं.....	12
अध्याय ४ — ईश्वर ईर्ष्यालु, डींग मारने वाला या अहंकारी नहीं है.....	13
अध्याय ५ — ईश्वर अशिष्ट नहीं है और न ही अपनी मर्जी थोपता है.....	14
अध्याय ५ — ईश्वर अशिष्ट नहीं है और न ही अपनी मर्जी थोपता है.....	15
अध्याय ६ — ईश्वर जल्दी गुस्सा नहीं होता और न बुराई के बारे में सोचता है.....	17
अध्याय ७ — ईश्वर अन्याय पर खुशी नहीं मनाता, बल्कि सच में खुशी मनाता है.....	18
अध्याय ८ — ईश्वर सब कुछ सहता है, सब कुछ पर विश्वास करता है, सब कुछ की आशा करता है, सब कुछ बर्दाश्त करता है.....	19
अध्याय ९ — ईश्वर कभी असफल नहीं होता / हार नहीं मानता.....	20
अध्याय १० — इनमें से सबसे बड़ा प्रेम है.....	21
अध्याय ११ — अपने सारे दिल, मन, आत्मा और बल से प्रभु से प्रेम करना.....	22

विषय-सूची

ईश्वर, आप कौन हैं?

यह प्रश्न संदेह, विद्रोह या अविश्वास से उत्पन्न नहीं हुआ है। यह मानव हृदय द्वारा पूछे जाने वाला सबसे सच्चा प्रश्न है। हर पीढ़ी, हर संस्कृति और हर आत्मा—चाहे वह धार्मिक हो या न हो—ने इस प्रश्न के साथ किसी न किसी रूप में जूझती रही है। ईश्वर वास्तव में कौन है? वह कैसे है? क्या उन पर भरोसा किया जा सकता है? क्या वह प्रेम करने वाले हैं, या दूर रहने वाले? धैर्यवान, या जल्दी गुस्सा होने वाले? क्या वह हमारे भले की इच्छा रखते हैं, या सिर्फ हमारी आज्ञापालन की माँग करते हैं?

यह पुस्तक इसलिए लिखी गई है क्योंकि उस प्रश्न का उत्तर जीवन की किसी भी अन्य चीज़ से कहीं अधिक मायने रखता है।

पवित्र ग्रंथ अद्भुत सरलता के साथ घोषित करता है, "ईश्वर प्रेम है" (1 यूहन्ना 4:8; 1 यूहन्ना 4:16)। पर बहुत से लोगों के लिए, यह सच अमूर्त बना रहता है, गलत समझा जाता है, या डर, अपराध-बोध और ईश्वर की विकृत छवियों की छाया में घिर जाता है। हम अपने होठों से कबूल कर सकते हैं कि ईश्वर प्रेम है, लेकिन हमारे हृदय के गहरे भीतर हम इस बात को लेकर संघर्ष करते हैं कि क्या वह सचमुच हमारे प्रति धैर्यवान हैं, हमारे प्रति कृपालु हैं, अपने व्यवहार में मृदु हैं, और तब भी वफ़ादार हैं जब हम असफल होते हैं।

इस पुस्तक का उद्देश्य इस एकल, शक्तिशाली सच—"ईश्वर प्रेम है"—को लेना और पवित्र ग्रंथ को अपने आप को समझाने देना है। दर्शन, परंपरा या व्यक्तिगत राय से तर्क बनाने के बजाय, ये अध्याय बस पवित्र ग्रंथ को ईश्वर के हृदय और स्वभाव को प्रकट करने देते हैं। 1 कुरिन्थियों 13 का उपयोग प्रेम, और इसलिए ईश्वर स्वयं के, दिव्य वर्णन के रूप में करते हुए, हम धीरे-धीरे, छंद दर छंद, इस बात पर चलेंगे कि ईश्वर मनुष्यों के प्रति—और आप व्यक्तिगत रूप से—वास्तव में कैसे हैं।

यह कोई ऐसी पुस्तक नहीं है जो पाठक को दोषी ठहराने, आरोप लगाने या बोझ डालने के लिए है। यह चंगा करने, बहाल करने और आमंत्रित करने के लिए लिखी गई है। कई लोग ईश्वर से इसलिए दूर हो गए हैं क्योंकि उन्होंने उनकी एक झूठी तस्वीर पर विश्वास कर लिया था, इसलिए नहीं कि उन्हें ईश्वर से नफरत थी। इतिहास के आरंभ से, सबसे बड़ी लड़ाई कभी भी सिर्फ आज्ञापालन या व्यवहार के बारे में नहीं रही—यह हमेशा भरोसे के बारे में रही है। शैतान का सबसे बड़ा झूठ हमेशा ईश्वर के स्वभाव के बारे में रहा है। यह पुस्तक उस झूठ का सच से सामना करने के लिए मौजूद है।

जब आप पढ़ेंगे, तो आप देखेंगे कि यह यात्रा धीरे और जानबूझकर आगे बढ़ती है। प्रेम को जल्दी में नहीं किया जाता। सच पर जबरदस्ती नहीं थोपा जाता। ईश्वर स्वयं धैर्यवान और कृपालु हैं, और यह पुस्तक उसी लय को दर्शाती है। प्रत्येक अध्याय पिछले अध्याय पर आधारित होता है, एक एकल, स्पष्ट चित्र बनाता है: ईश्वर प्रेम है, वह शाश्वत रूप से ऐसे ही रहे हैं, वह नहीं बदलते, और उनके स्वभाव में मुड़ने की छोटी सी भी परछाई नहीं है। अंततः, यह सिर्फ ईश्वर के बारे में एक पुस्तक नहीं है—यह ईश्वर और आपके बारे में एक पुस्तक है। यह इस बारे में है कि वह आपके बारे में क्या सोचते हैं, वह आपसे कैसे जुड़ते

हैं, वह आपकी असफलताओं, आपके संदेह, आपके प्रश्नों और अर्थ की आपकी लालसा पर कैसे प्रतिक्रिया करते हैं। यह डर पर आधारित धर्म से निकलकर प्रेम और भरोसे पर आधारित एक रिश्ते में आने का निमंत्रण है।

यदि यह पुस्तक आपको ईश्वर को अधिक स्पष्ट रूप से देखने, उन पर गहरा भरोसा करने और उनसे स्वतंत्र रूप से प्रेम करने में मदद करती है, तो इसने अपना उद्देश्य पूरा कर लिया है। मेरी प्रार्थना है कि जैसे-जैसे आप इन पन्नों की यात्रा करेंगे, आप एक कठोर ईश्वर को नहीं देखेंगे—बल्कि एक अधिक कृपालु ईश्वर को देखेंगे; एक दूर के ईश्वर को नहीं—बल्कि एक निकट के ईश्वर को देखेंगे; एक ऐसे ईश्वर को नहीं जो हार मान जाता है—बल्कि एक ऐसे ईश्वर को देखेंगे जिसका प्रेम कभी असफल नहीं होता। आशा है कि यह यात्रा आपको ईश्वर के हृदय की ओर ले जाएगी।

— ईनॉक विनोद खंडागले

अध्याय १ - ईश्वर के बारे में चार बातें।

मेरी पत्नी और मैं बचपन से एक-दूसरे को जानते हैं। हालाँकि, जब मैंने उनके माता-पिता से उनसे विवाह के लिए कहा, तो उन्हें यह तय करने में पाँच साल लग गए कि क्या वे अपनी बेटी को मुझे देने के लिए तैयार हैं। तब मुझे उनकी हिचकिचाहट समझ आई, क्योंकि विवाह जीवन भर की एक प्रतिबद्धता है और इसके लिए सावधानीपूर्वक विचार करना उचित है।

फिर भी, ईश्वर के साथ अनंत जीवन विवाह से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है और इसके लिए हमारे और भी गहरे विचार और ध्यान की आवश्यकता है। दुर्भाग्य से, हम शायद ही कभी रुककर इस बात पर वास्तव में विचार करते हैं कि ईश्वर कौन हैं। क्या उस स्वर्ग के राजा को जानना आवश्यक नहीं है, जिसके साथ हम अनंत काल बिताने की आशा करते हैं? और मेरा मतलब सिर्फ उनके बारे में बुनियादी जानकारी रखने से नहीं है, बल्कि उनके स्वभाव, उनके विचारों और हमारे प्रति उनके कार्यों को समझने से है।

पैगंबर एलेन जी. व्हाइट, अपनी पुस्तक "पितृओं और पैगंबरों" के पृष्ठ ३३.१ में, कुछ छंदों को जोड़कर ईश्वर के बारे में एक गहन बयान देती हैं। वह कहती हैं, "ईश्वर प्रेम है।" 1 यूहन्ना 4:16। उनका स्वभाव, उनका नियम, प्रेम है। यह हमेशा से रहा है; यह हमेशा रहेगा। "वह ऊँचा और उदात्त है जो अनंत काल में निवास करता है," जिनके "मार्ग अनंत हैं," वह नहीं बदलते। उनके साथ "कोई बदलाव नहीं, और न ही मुड़ने की कोई छाया है।" यशायाह 57:15; हबक्कूक 3:6; याकूब 1:17।

इस बयान और पवित्र ग्रंथ के छंदों से हम ईश्वर के बारे में ये चार पहलू सीखते हैं।

१. ईश्वर प्रेम है — 1 यूहन्ना 4:16

२. ईश्वर अनंत है — यशायाह 57:15

३. उनके मार्ग सनातन हैं — हबक्कूक 3:6

४. ईश्वर में थोड़ा भी बदलाव नहीं आता - याकूब 1:17

बेशक ईश्वर सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी और सर्वज्ञ भी हैं, लेकिन ईश्वर के ये पहलू बिना उचित, सावधानीपूर्वक और पर्याप्त समय दिए अध्ययन किए जाने पर पूरी तरह गलत समझे जा सकते हैं, जिससे हम कई गलत निष्कर्षों पर पहुँच सकते हैं। अतः इस समय, हम इन पहलुओं को अलग ही छोड़ देंगे।

हालाँकि, इस बिंदु तक पहुँचने के बाद, आप पूछ सकते हैं, "अगर ईश्वर प्रेम है, अगर वह अनंत है, अगर उनके मार्ग सनातन हैं, या अगर उनके स्वभाव में थोड़ी सी भी परिवर्तन की छाया नहीं है, तो इससे मुझे क्या फर्क पड़ता है या मुझे क्या लाभ होता है?"

कृपया आप जिस सबसे अद्भुत सत्ता से कभी भी मिलेंगे, उसे जानने के लिए और भी गहराई में डूबने के लिए तैयार हो जाइए।

१. ईश्वर प्रेम है: हमारे मूल्य और आशा की नींव।

यह कि ईश्वर प्रेम है, इसका मतलब है कि प्रेम सिर्फ वह एक कार्य नहीं है जो वह करते हैं, बल्कि यह उनके सार का हिस्सा है (1 यूहन्ना 4:8)। यह सच हमारे लिए इसलिए लाभदायक है क्योंकि यह हमारे मूल्य को हमारे प्रदर्शन, आज्ञापालन या समझ पर नहीं, बल्कि ईश्वर के स्वभाव पर स्थापित करता है। हम इसलिए प्रेमित हैं क्योंकि ईश्वर प्रेम है, इसलिए नहीं कि हम प्रेम के योग्य हैं। यह विश्वासी को गहरा विश्वास देता है: तब भी जब परिस्थितियाँ दर्दनाक हों या विश्वास कमज़ोर महसूस हो, ईश्वर का हमारे प्रति दृष्टिकोण प्रेमपूर्ण बना रहता है। उनके आदेश, फैसले और अनुशासन सभी प्रेम से निकलते हैं, क्रूरता या उदासीनता से नहीं। यह जानकर हमारी आशा को मज़बूती मिलती है और हम डर से मुक्त हो जाते हैं, क्योंकि हम यह विश्वास करना सीखते हैं कि ईश्वर जो भी करते हैं, वह अंततः प्रेम द्वारा निर्मित होता है। (1 यूहन्ना 4:8-10; रोमियों 8:38-39; यूहन्ना 3:16)

२. ईश्वर अनंत है: उनका प्रेम कभी शुरू नहीं हुआ और कभी खत्म नहीं होगा।

पवित्र ग्रंथ इस बारे में बहुत स्पष्ट है। ईश्वर अनंत है, और इसलिए हमें उनके साथ हमेशा के लिए रहने का अवसर मिलता है। लेकिन क्योंकि ईश्वर अनंत है, इसलिए उनके प्रेम की शुरुआत सृष्टि में नहीं हुई और न ही यह समय-सीमित घटनाओं पर निर्भर करता है (भजन संहिता 90:2)। उन्होंने अनादि से अनंत तक प्रेम किया है। यह हमें यह विश्वास दिलाकर लाभ पहुँचाता है कि ईश्वर का हमारे प्रति प्रेम प्रतिक्रियाशील या अस्थायी नहीं है। हम कोई बाद में सोची गई बात नहीं थे, न ही ईश्वर ने केवल तभी हमसे प्रेम करना शुरू किया जब हम उनकी ओर मुड़े। पवित्र ग्रंथ सिखाता है कि ईश्वर ने संसार की नींव से पहले ही अपना प्रेम हम पर तय कर दिया था, जिसका मतलब है कि उनका प्रेम हमारे अस्तित्व से पहले का है और हमारी असफलताओं से भी आगे तक रहेगा। यह अनंत प्रेम अडिग सुरक्षा प्रदान करता है: जिसकी कोई शुरुआत नहीं है, उसका कोई अंत नहीं हो सकता। विश्वासी इस आत्मविश्वास के साथ विश्राम कर सकता है कि ईश्वर समय के साथ थकेंगे नहीं, ऊबेंगे नहीं, या दूर हो जाएँगे। (यिर्मयाह 31:3; इफिसियों 1:4-5; भजन संहिता 103:17)

३. ईश्वर के मार्ग सनातन हैं: उनके उद्देश्य हमेशा विश्वसनीय होते हैं।

ईश्वर के मार्गों का सनातन होना का मतलब है कि उनके सिद्धांत, उद्देश्य और वादे सभी पीढ़ियों में एक समान बने रहते हैं (यशायाह 40:28)। यह हमें एक बदलती दुनिया में स्थिरता देकर लाभ पहुँचाता है। मानवीय प्रणालियाँ, नैतिकता और रिश्ते बदलते हैं, लेकिन ईश्वर के मार्ग नहीं। जो उन्होंने अच्छा कहा, वह अच्छा बना रहता है; जो उन्होंने वादा किया, वह सच बना रहता है। क्योंकि उनके मार्ग सनातन हैं, हम इस बात पर भरोसा कर सकते हैं कि उनका मार्गदर्शन हमें कभी गलत दिशा में नहीं ले जाएगा और उनके वादे कभी खत्म नहीं होंगे। अनिश्चितता, पीड़ा या सांस्कृतिक भ्रम के समय में, विश्वासी आत्मविश्वास के साथ अपना जीवन ईश्वर के मार्गों के अनुसार ढाल सकते हैं, यह जानते हुए कि वे अस्थायी रुझानों के बजाय अनंत ज्ञान पर आधारित हैं। चाहे यह आपके स्वास्थ्य, आपके पारिवारिक जीवन, आपके व्यवसाय या आपके करियर के बारे में हो, ईश्वर के सिद्धांत और उनके मार्ग हमेशा आपके लिए सर्वोत्तम साबित होंगे।

(भजन संहिता 77:13; यशायाह 55:8-9; मत्ती 24:35)

४. ईश्वर नहीं बदलते: हमारे विश्वास और शांति की गारंटी।

ईश्वर के अपरिवर्तनशील स्वभाव का मतलब है कि वह पूरी तरह से वफ़ादार और एक समान हैं (मलाकी 3:6)। यह हमें यह विश्वास दिलाकर लाभ पहुँचाता है कि ईश्वर कल भी वही होंगे जो आज हैं। वह अपने मानकों को नहीं बदलेंगे, अपना प्रेम नहीं छीनेंगे, या अपने वादों के विपरीत नहीं जाएँगे। यदि ईश्वर बदल सकते थे, तो हमारा विश्वास अस्थिर होता; मुक्ति अनिश्चित होती; आशा नाजुक होती। लेकिन क्योंकि उनके स्वभाव में थोड़ा सा भी बदलाव नहीं है, हम उन पर पूरी तरह भरोसा कर सकते हैं। उनकी करुणा हमेशा करुणा ही रहेगी, उनका न्याय हमेशा न्याय ही रहेगा, और उनका प्रेम हमेशा शुद्ध ही रहेगा। यह अपरिवर्तनशीलता विश्वासी के हृदय में शांति लाती है, खासकर संदेह, पीड़ा या असफलता के दौर में, क्योंकि ईश्वर की हमारे प्रति प्रतिबद्धता हमारी एकरूपता पर नहीं, बल्कि उनकी अपनी पर निर्भर करती है। (मलाकी 3:6; याकूब 1:17; इब्रानियों 13:8)

ईश्वर के बारे में ये सच्चाइयाँ जानने ने निश्चित रूप से आपको इस बारे में और अधिक जानने के लिए प्रेरित किया होगा कि जब पवित्र ग्रंथ कहता है कि ईश्वर प्रेम है, तो इसका क्या अर्थ है। आगे के अध्याय में, हम इन सच्चाइयों में और भी गहराई से उतरेंगे।

अध्याय २ - ईश्वर = प्रेम

जिस तरह स्तनधारी, पक्षी और मछलियों को प्राणी कहा जाता है, और आप और जैसे हमें मनुष्य कहा जाता है, उसी तरह, स्वर्गीय प्राणियों के समूह को देवदूत कहा जाता है। इसी तरह, सर्वशक्तिमान—जो सबसे ऊपर है, जिसने हमें बनाया है, और जो हमारा पालन-पोषण और देखभाल करता है—को प्रेम कहा जाता है।

हाँ, प्रेम—सिर्फ ईश्वर नहीं।

धर्मों, जातियों और भाषाओं के बावजूद, मानवता ने सर्वशक्तिमान को एक शब्द —ईश्वर— से पहचाना है। लेकिन पवित्र ग्रंथ कुछ और गहरा बताता है: ईश्वर प्रेम है। उन्हें इसलिए प्रेम कहा जाता है क्योंकि हम उनके द्वारा, उनमें और उनकी कोमल देखभाल की वजह से अस्तित्व में हैं।

यदि मानवता में कोई भलाई है, प्रकृति में सामंजस्य है, या देवदूतों में पवित्रता है, तो यह इसलिए है क्योंकि ईश्वर प्रेम है। उनके प्रेम का सार और सिद्धांत समस्त सृष्टि में—जीवित और निर्जीव दोनों में—प्रवाहित होते हैं, और सब कुछ उनकी दिव्य देखभाल में एक साथ बँधता है।

बेशक, पवित्र ग्रंथ के ईश्वर को उनके विभिन्न गुणों और विशेषताओं का वर्णन करने वाले विभिन्न नामों से जाना जाता है। लेकिन चलिए इसे ईश्वर के स्वभाव—प्रेम—से भ्रमित न हों। यही बात उन्हें दुनिया के तथाकथित सभी ईश्वरों से अलग करती है। उनसे निकलने वाला वास्तविक और ईमानदार प्रेम है जो उनके मन, स्वभाव और व्यक्तित्व को इतना अलग बनाता है।

"ईश्वर प्रेम है।" 1 यूहन्ना 4:16 पवित्र ग्रंथ के अद्वितीय छंदों में से एक है। चलिए मैं आपको दिखाता हूँ कि पवित्र ग्रंथ स्वयं इस छंद को कैसे समझाता है।

1 कुरिन्थियों के अध्याय 13 में, पवित्र ग्रंथ बताता है कि प्रेम क्या है। लेकिन दिलचस्प तथ्य यह है कि, 1 यूहन्ना 4:16 और 1 कुरिन्थियों के अध्याय 13 दोनों में, प्रेम के लिए इस्तेमाल किया गया शब्द, जिस भाषा में पवित्र ग्रंथ मूल रूप से लिखा गया था, यूनानी में 'अगापे' कहलाता है। इसका मतलब है कि दोनों ही छंदों में, प्रेम (यूनानी में अगापे) शब्द बिल्कुल एक जैसा है। तो इसका मतलब है कि जब पवित्र ग्रंथ हमें बताता है कि ईश्वर प्रेम (अगापे) है, तो 1 कुरिन्थियों के अध्याय 13 में प्रेम (अगापे) के बारे में जो भी लिखा गया है, वह वास्तव में ईश्वर के बारे में बात कर रहा है।

इस समझ के साथ, 1 कुरिन्थियों के अध्याय 13 में जहाँ भी प्रेम शब्द का उल्लेख है, चलिए प्रेम शब्द को ईश्वर से बदलते हैं और अध्याय को पढ़ते हैं और देखते हैं कि हमें क्या मिलता है।

लेकिन उससे पहले, चलिए इसे वैसा ही पढ़ें जैसा लिखा गया है।

प्रेम धैर्यवान और कृपालु है। प्रेम ईर्ष्यालु, डींग मारने वाला, अहंकारी या अशिष्ट नहीं है। प्रेम अपनी मर्जी नहीं थोपता। प्रेम जल्दी चिढ़ता या गुस्सा नहीं होता, और न ही वह गलतियों की गिनती रखता है। यह अन्याय पर खुशी नहीं मनाता, बल्कि सच में खुशी मनाता है। प्रेम सब कुछ सहता है, सब कुछ पर विश्वास करता है, सब कुछ की आशा करता है, सब कुछ बर्दाश्त करता है। प्रेम हार नहीं मानता। - कुरिन्थियों 13:4-7 (NLT और KJV संस्करण)

जब हम इन पवित्र ग्रंथ के छंदों को पढ़ते हैं, तो हम सोचते हैं कि संत पौलुस हमें यह बता रहे हैं कि हमें अपना जीवन कैसे जीना चाहिए। हाँ, वे ऐसा ही कर रहे हैं। लेकिन इससे भी अधिक, वह हमें यह दिखा रहे हैं कि ईश्वर अपने स्वभाव में कैसे हैं। अब चलिए प्रेम शब्द को ईश्वर से बदलकर इन छंदों को ध्यान से पढ़ते हैं ताकि हम उन्हें और भी बेहतर और पूरी तरह से समझ सकें।

बदला हुआ संस्करण: ईश्वर धैर्यवान और कृपालु है। ईश्वर ईर्ष्यालु, डींग मारने वाला, अहंकारी या अशिष्ट नहीं है। ईश्वर अपनी मर्जी नहीं थोपता। वह जल्दी चिढ़ता या गुस्सा नहीं होता, और न ही वह गलतियों की गिनती रखता है। ईश्वर अन्याय पर खुशी नहीं मनाता, बल्कि सच में खुशी मनाता है। ईश्वर सब कुछ सहता है, सब कुछ पर विश्वास करता है, सब कुछ की आशा करता है, सब कुछ बर्दाश्त करता है, ईश्वर हार नहीं मानता। - 1 कुरिन्थियों 13:4-7 (NLT और KJV संस्करण)

संभवतः आज तक, आपको 1 कुरिन्थियों 13 में प्रेम के गुण सिर्फ एक आज्ञा के रूप में सिखाए गए हैं। लेकिन मैं आपको एक राज़ बताऊँ, यह अंश यह नहीं बता रहा है कि प्रेम क्या है या ईश्वर कौन है, बल्कि यह हमें ईश्वर के उन विचारों और दृष्टिकोण को दिखाता है जो आप और मेरे प्रति हैं। इसे अगले अध्याय में देखने के लिए, हम इन छंदों को तोड़ेंगे और एक ध्यानपूर्वक हृदय के साथ उन्हें धीरे-धीरे पढ़ेंगे। लेकिन कृपया याद रखें, हर बार जब आप "प्रेम" शब्द पढ़ेंगे, तो यह ईश्वर के बारे में बात कर रहा है, क्योंकि ईश्वर प्रेम है।

अध्याय ३ - ईश्वर धैर्यवान और कृपालु हैं।

प्रेम धैर्यवान है, प्रेम कृपालु है। - 1 कुरिन्थियों 13:4

यीशु ने एक बार एक कहानी सुनाई जो हमारे ईश्वर के बारे में कठोर विचारों को शांति से तोड़ देती है—व्यर्थ संपत्ति वाले बेटे की कहानी। अपने पिता से दूर एक जीवन चुनने और अपनी विरासत बर्बाद कर देने के बाद, बेटा आखिरकार घर लौटने का फैसला करता है। इस तरह, उसने डर और स्वार्थ से प्रेरित होकर माफ़ी माँगने की तैयारी की। लेकिन जब वह अभी भी दूर था, तब कुछ आश्चर्यजनक हुआ। पवित्र ग्रंथ कहता है, "लेकिन जब वह अभी भी बहुत दूर था, तब उसके पिता ने उसे देखा, और उस पर करुणा किया, और दौड़कर उसके गले लग गया, और उसे चूमा" (लूका 15:20, KJV)।

यहीं पर धैर्य और कृपा एक साथ काम करते हैं। पिता को गुस्सा होने के हर संभव कारण थे। उनका अपमान हुआ था, उन्हें ठुकराया गया था, और वे आहत हुए थे। फिर भी, उन्होंने इंतज़ार किया। वे सड़क की ओर देखते रहे। उन्होंने खामोशी में आशा बनाए रखी। वह इंतज़ार ही धैर्य था। लेकिन यहाँ अकेला धैर्य नहीं दौड़ता। पिता की कृपा भी अपने बेटे की ओर दौड़ती है। पिता ने सिर्फ बेटे की अनुपस्थिति को बर्दाश्त नहीं किया; उन्होंने प्रेम के साथ उसकी ओर बढ़कर, बिना कोई स्पष्टीकरण दिए, उसके सम्मान को बहाल किया, और पूरी तरह से पश्चाताप व्यक्त करने से पहले ही रिश्ते को वापस ले लिया।

कई तरह से, हम वे नासमझ बेटे-बेटियाँ हैं। उसकी तरह, हम विकल्प चुनते हैं—कभी जानबूझकर, कभी लापरवाही से—जो हमें पिता के हृदय से दूर ले जाते हैं। हम आज्ञादी, आनंद, सफलता, या नियंत्रण का पीछा करते हैं, यह मानते हुए कि अपनी शर्तों पर जीवन अधिक पूर्ण होगा। तब भी जब हम लौटते हैं, तो हमारे मकसद अक्सर मिले-जुले होते हैं। हम इसलिए वापस आते हैं क्योंकि हम थके हुए, टूटे हुए, डरे हुए या ज़रूरतमंद होते हैं—हमेशा इसलिए नहीं कि हमारे दिल शुद्ध हों। फिर भी, कहानी एक ऐसा सच उजागर करती है जिसे हम स्वीकार करने के लिए संघर्ष करते हैं: ईश्वर का प्रेम पूर्ण पश्चाताप से प्रेरित नहीं होता। यह उनके स्वभाव से बहता है।

पवित्र ग्रंथ हमें बताता है, "प्रभु दयालु और कृपालु है, क्रोध में धीमा, और दया में प्रचुर है" (भजन संहिता 103:8, KJV)। ईश्वर का धैर्य मतलब है कि जब हम उनकी इच्छा के विपरीत चलते हैं, तब वे हम पर छोड़ते नहीं हैं। उनकी कृपा का मतलब है कि जब हम घायल होकर और अनिश्चित होकर लौटते हैं, तब वे हमारा अपमान नहीं करते। तब भी जब हम अपने पापी जीवन में होते हैं, तब भी जब हम अपने हृदय के दूरस्थ देशों में ठहरते हैं, स्वर्ग फैसला सुनाने की तैयारी नहीं कर रहा है—वह करुणा के साथ इंतज़ार कर रहा है।

प्रेरित पौलुस लिखते हैं, "या तुम उसकी भलाई और सहनशीलता और धीरज की समृद्धि को तुच्छ समझते हो, यह न जानते हुए कि ईश्वर की भलाई तुम्हें पश्चाताप की ओर ले जाती है?" (रोमियों 2:4, KJV)। हम अक्सर समझते हैं कि डर हमें बदलता है, लेकिन ईश्वर जानते हैं कि कृपा ही दिलों को नर्म करती है। प्रेम हमें घर खींच लाता है।

फिर भी, हम ईश्वर का एक बेतुका चित्र अपने मन में रखते हैं—ठंडा, बेचैन, आसानी से नाराज़ होने वाला। यह विकृत छवि ईश्वर को चोट पहुँचाती है, क्योंकि यह उनके हृदय का गलत ढंग से प्रतिनिधित्व करती है, और यह हमें भी चोट पहुँचाती है, क्योंकि यह हमें छिपाए रखती है। लेकिन पवित्र ग्रंथ हमें नरमी से सुधारता है: "प्रेम धीरज रखता है, और कृपालु है" (1 कुरिन्थियों 13:4, KJV)। ईश्वर प्रेम है, और प्रेम एक साथ धैर्यवान और कृपालु दोनों है। पिता अभी भी सड़क की ओर देख रहे हैं। बाँहें बाँधकर नहीं, बल्कि खुले हृदय के साथ। चाहे हम दूर हों या अपूर्ण कारणों से वापस मुड़ रहे हों, वे हमसे एक ऐसे प्रेम से मिलते हैं जो इंतज़ार करता है—और फिर दौड़ता है।

अध्याय ४ — ईश्वर ईर्ष्यालु, डींग मारने वाला या अहंकारी नहीं है।

प्रेम ईर्ष्या नहीं करता, प्रेम डींग नहीं मारता, प्रेम अहंकारी नहीं है। - 1 कुरिन्थियों 13:4

ईश्वर हमारे प्रति ईर्ष्यालु नहीं है। इस छंद में हमें बताया गया है कि ईश्वर हमारी प्रगति के बारे में ईर्ष्यालु या असुरक्षित नहीं है। हमारा विकास, हमारी प्रतिभाएँ, या हमारी सफलता उन्हें खतरा नहीं देती है। इसके विपरीत, ईश्वर हमारे फलने-फूलने की इच्छा रखते हैं। वे हमारे लिए बुराई के बजाय भलाई की योजना बनाते हैं, और वे हमें आशा से भरे भविष्य में बुलाते हैं: क्योंकि मैं वे विचार जानता हूँ जो मैं तुम्हारे प्रति सोचता हूँ, प्रभु कहते हैं, शांति के विचार, और बुराई के नहीं, तुम्हें एक आशा का अंत देने के लिए। यिर्मयाह 29:11।

एक ईर्ष्यालु या असुरक्षित सत्ता दूसरों की सफलता से डरती है, लेकिन ईश्वर अपने बच्चों को उठाने में आनंद लेते हैं। वह एक ऐसे पिता हैं जो विकास का जश्न मनाते हैं, न कि अपनी ही सृष्टि के साथ प्रतिस्पर्धा करने वाले।

जब पवित्र ग्रंथ कहता है कि ईश्वर एक "ईर्ष्यालु ईश्वर" है, तो इसका मतलब मनुष्य के, पापी अर्थ में ईर्ष्या नहीं है—जो ईर्ष्या, डर, या स्वामित्व की भावना से भरी हो। ईश्वर की ईर्ष्या प्रेम और वफ़ादारी में निहित है। यह एक वचन-पालन करने वाले ईश्वर की ईर्ष्या है, जो अपने लोगों को उन मूर्तियों के साथ बाँटने से इनकार करता है जो उन्हें नष्ट करती हैं।

जैसे एक प्रेम करने वाला जीवनसाथी सही ढंग से वफ़ादारी की इच्छा रखता है, ईश्वर हमारे दिलों की इच्छा इसलिए रखते हैं क्योंकि उनमें कोई कमी नहीं है, बल्कि इसलिए कि वे जानते हैं कि कुछ भी जिसे हम अपने आप को समर्पित करेंगे, वह अंततः हमें नुकसान पहुँचाएगा। उनकी ईर्ष्या रक्षा करती है; यह कम करती नहीं है।

ईश्वर डींग मारने वाले नहीं हैं। यद्यपि उन्हें डींग मारने का हर कारण है—सभी चीज़ों के रचयिता होने के नाते, शक्ति और ज्ञान में पूर्ण होने के नाते—वह प्रभुत्व या धमकी देने के लिए अपनी महानता का प्रदर्शन नहीं करते। इसके बजाय, ईश्वर नम्रता के माध्यम से अपना हृदय प्रकट करते हैं।

मसीह में, हम एक ऐसे ईश्वर को देखते हैं जिन्होंने आत्म-उन्नति के बजाय आत्म-निर्वात चुना। यीशु ने अपने पद या विशेषाधिकार को नहीं थामा, बल्कि स्वेच्छा से एक सेवक और गिरे हुए मनुष्य के रूप और शरीर को अपनाया, खुद को क्रूस पर मृत्यु तक नम्र कर लिया (फिलिप्पियों 2:5-8)।

ईश्वर अहंकारी नहीं हैं। यीशु कहते हैं, "मेरे पास आओ, जो कोई थके हुए और बोझ से दबे हुए हैं, मैं तुम्हें आराम दूँगा। मेरा जूआ अपने ऊपर उठाओ और मुझसे सीखो; क्योंकि मैं मृदु और दीन हृदय का हूँ: और तुम अपनी आत्माओं को आराम पाओगे। क्योंकि मेरा जूआ सरल है, और मेरा बोज हल्का है।"

मत्ती 11:29 में, यीशु अपने हृदय को "मृदु और दीन" के रूप में वर्णित करते हैं। यह एक आश्चर्यजनक बयान है। जिनके पास स्वर्ग और पृथ्वी में सभी अधिकार हैं, वे खुद को मृदु और सुलभ के रूप में प्रस्तुत करते हैं। ईश्वर हमारे प्रति कठोर, अहंकारी, या उपेक्षापूर्ण नहीं हैं। वे हमारा सामना धैर्य और करुणा से करते हैं।

उसी छंद में, यीशु कहते हैं कि उनका जूआ हल्का है। लेकिन इसके विपरीत, संसार हमें एक भारी और क्रूर जूआ उठाने का उपदेश देता है—जो ईर्ष्या, डींग मारने और अहंकार से बना है। यह जूआ तुलना, प्रतिस्पर्धा और लगातार आत्म-रक्षा की मांग करता है। यह हमें थका देता है। यह रिश्तों को तोड़ता है और आत्मा पर बोझ डालता है। अहंकार शक्ति का वादा करता है लेकिन अलगाव देता है।

यीशु एक हल्के जूए की पेशकश करते हैं। वे हमें संसार के तरीके के भार को नीचे रखने और इसके बजाय उनका जूआ उठाने के लिए आमंत्रित करते हैं। उनका जूआ नम्रता, प्रेम और पिता पर विश्वास से चिह्नित है। यह हमें अपने स्वार्थ का त्याग करने के लिए कहता है और बदले में हमें थकान के बजाय आराम देता है। एक ऐसे ईश्वर के साथ चलना जो ईर्ष्यालु, डींग मारने वाला या अहंकारी नहीं है, हमें उसी तरह जीने की आज़ादी देता है—प्रेम में सुरक्षित, नम्रता में स्थिर, और कृपा में शांत।

अध्याय ५ — ईश्वर अशिष्ट नहीं है और न ही अपनी मर्ज़ी थोपता है।

प्रेम दूसरों का अपमान नहीं करता, यह स्वार्थी नहीं है - 1 कुरिन्थियों 13:5

ईश्वर हमारे प्रति अशिष्ट नहीं हैं, और न ही वे हमारे साथ जबरदस्ती या दबंगई भरे ढंग से व्यवहार करते हैं। वे डर से आज्ञापालन के लिए दबाव नहीं डालते, मजबूर नहीं करते या छल नहीं करते। इसके बजाय, ईश्वर मनुष्यता से निपटने के अपने तरीके में नम्र, सम्मानजनक और धैर्यवान हैं। यद्यपि वे सर्वोच्च और सर्वशक्तिमान हैं, वे बल के बजाय प्रेम के माध्यम से काम करना चुनते हैं। वे अपने अधिकार का प्रयोग हमेशा करुणा, ज्ञान और हमारे भले के प्रति गहरी चिंता के साथ करते हैं।

ईश्वर स्वार्थी भी नहीं हैं। वे अपनी व्यक्तिगत कमी या असुरक्षा को पूरा करने के लिए आज्ञापालन, विश्वास, या भक्ति की अपेक्षा नहीं करते। पवित्र ग्रंथ यह स्पष्ट करता है कि ईश्वर अपने आप में संपूर्ण हैं (प्रेरितों के काम 17:24-25)। एक सच्चा उपासक अपने हृदय की बिना शर्त कृतज्ञता और आभार से ईश्वर की उपासना करता है। वह समझता है कि ईश्वर का हर आदेश, निमंत्रण, और सुधार उनके प्रेम और हमारी रक्षा और आशीर्वाद करने की उनकी इच्छा से निकलता है। जैसा कि देउतेरेनोमी 10:12-13 हमें याद दिलाता है, ईश्वर हमें अपने मार्गों पर चलने के लिए कहते हैं "तुम्हारे अपने भले के लिए।"

यीशु अपने पिता की इस नम्र प्रकृति को पूरी तरह से प्रकट करते हैं। अपने पृथ्वी पर के कार्यकाल के दौरान, यीशु ने कभी भी किसी पर अपने आप को थोपा नहीं। उन्होंने आमंत्रित किया, सिखाया, उन्हें चंगा किया, और उनसे प्रेम किया—लेकिन उन्होंने लोगों को चुनने की आज्ञा दी। यहाँ तक कि जब कई लोग उनसे दूर चले गए, तो यीशु ने उनका पीछा नहीं किया या उन्हें रुकने के लिए मजबूर नहीं किया (यूहन्ना 6:66-67)। इसके बजाय, उन्होंने मानवीय पसंद का सम्मान किया। यही हृदय प्रकाश 3:20 में भी प्रतिबिंबित होता है, जहाँ यीशु कहते हैं, "देखो, मैं दरवाज़े पर खड़ा हूँ और दस्तक देता हूँ।" वह हमारे दिल का दरवाज़ा नहीं तोड़ता; वह स्वागत किए जाने की प्रतीक्षा करता है।

यहाँ तक कि स्वर्ग और पृथ्वी के प्रभु के रूप में अपने अधिकार का प्रयोग करते हुए भी, ईश्वर हमारी स्वतंत्र इच्छा का सम्मान करते हैं। देउतेरेनोमी 30:19 में, ईश्वर अपने लोगों के सामने जीवन और मृत्यु, आशीर्वाद और श्राप रखते हैं, और फिर प्रेम से उन्हें जीवन चुनने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। यह छंद हमें दिखाता है कि ईश्वर मार्गदर्शन और चेतावनी देते हैं, लेकिन वे मजबूर नहीं करते। वे उस सम्मान का सम्मान करते हैं जो उन्होंने हमें अपनी छवि वाले के रूप में दिया है। उनका नेतृत्व दमनकारी नहीं बल्कि रिश्ते पर आधारित है, जो हमें अंधेरे आज्ञाकारिता की मांग करने के बजाय विश्वास में आमंत्रित करता है।

ईश्वर के आदेश कभी भी मनमाने या स्वार्थी नहीं होते। जो भी वे हमसे मांगते हैं—चाहे आज्ञापालन, विश्वास, पश्चाताप, या आत्मसमर्पण—वे इसलिए मांगते हैं क्योंकि वे जानते हैं कि यह जीवन की ओर ले जाता है। भजन संहिता 84:11 हमें आश्वासन देता है कि "जो लोग सीधे चलते हैं, उन्हें वह कोई अच्छी चीज़ नहीं रोकते।" ईश्वर का हृदय हमेशा हमारे कल्याण की ओर झुका होता है। वे वह देखते हैं जो हम नहीं देख सकते और हमें उन रास्तों से बचाते हैं जो अंततः हमें नुकसान पहुँचाएंगे, तब भी जब वे क्षण भर में आकर्षक लगें।

एक ऐसी दुनिया में जहाँ शक्ति का उपयोग अक्सर प्रभुत्व जमाने के लिए किया जाता है और रिश्ते स्वार्थ से चलाए जाते हैं, ईश्वर अलग खड़े हैं। वे अशिष्ट, कठोर, स्वार्थी, या मांग करने वाले नहीं हैं। वे धैर्यवान, कृपालु, और हमारी कमज़ोरियों का ध्यान रखने वाले हैं। उनका प्रेम धमकी देने के बजाय आमंत्रित करता है, दबाव डालने के बजाय प्रेम से राज़ी करता है। यह

जानना हमें उन पर अधिक गहरा भरोसा करने, अधिक स्वतंत्रता से आत्मसमर्पण करने, और इस आश्वासन में विश्राम करने की अनुमति देता है कि जो भी वे करते हैं, वह हमारे लिए प्रेम से प्रेरित है—स्वयं की सेवा करने की इच्छा से नहीं।

ईश्वर हमारी क्षति पर अपनी मर्जी नहीं थोपता। वह हमें प्रेम से अपने रास्ते पर आमंत्रित करता है—हमारे भले, हमारे ठीक होने और हमारे आशीर्वादित जीवन के लिए।

अध्याय ६ — ईश्वर जल्दी गुस्सा नहीं होता और न बुराई के बारे में सोचता है।

प्रेम जल्दी क्रोधित नहीं होता, प्रेम बुराइयों का लेखा-जोखा नहीं रखता। - 1 कुरिन्थियों 13:5

ईश्वर को गुस्सा तो आता है, लेकिन वे जल्दी गुस्सा नहीं होते, आवेगपूर्ण या अपने क्रोध में अस्थिर नहीं हैं। पवित्र ग्रंथ बार-बार पुष्टि करता है कि प्रभु "कृपालु और दयावान, क्रोध में धीमे, और अटल प्रेम से परिपूर्ण" हैं (भजन संहिता 145:8)। ईश्वर के क्रोध और मनुष्य के क्रोध में एक गहरा अंतर है। मनुष्य का क्रोध अक्सर प्रतिक्रियाशील, भावुक, और स्वार्थी होता है, और यह अक्सर हमें पाप की ओर ले जाता है। इसीलिए पवित्र ग्रंथ हमें चेतावनी देता है, "क्रोधित हो, और पाप मत करो" (इफिसियों 4:26)। हमारा क्रोध नियंत्रण खो देता है; ईश्वर का क्रोध कभी नहीं।

जब ईश्वर क्रोध या कोप व्यक्त करते हैं, तब भी वे धैर्यवान, कृपालु, दयावान और करुणामय बने रहते हैं। उनका क्रोध कभी क्रूर या प्रतिशोधात्मक नहीं होता। यह बुराई, अन्याय, और सच के लगातार अस्वीकार करने के लिए एक धार्मिक प्रतिक्रिया है। ईश्वर का कोप उनकी पवित्रता और प्रेम से निकलता है—घायल अहंकार या चिढ़ से नहीं। मनुष्य के क्रोध के विपरीत, जो अक्सर बढ़ता है और नष्ट करता है, ईश्वर का क्रोध मापा हुआ, उद्देश्यपूर्ण, और दया द्वारा रोका गया है (विलाप 3:31-33)।

जब कोई पापी बार-बार पाप का चुनाव करता है और खुलकर घोषित करता है कि उसे ईश्वर से कोई लेना-देना नहीं, तब प्रभु उस पर अपने आप को थोपते नहीं हैं। वे मानवीय स्वतंत्रता का सम्मान करते हैं। ऐसी स्थितियों में, ईश्वर लोगों को उस रास्ते पर चलने देते हैं जिसे चुनने पर वे अड़े रहते हैं। पवित्र ग्रंथ इसका वर्णन ईश्वर द्वारा उन्हें "उनकी इच्छाओं के लिए छोड़ देने" के रूप में करता है (रोमियों 1:24-26)। कभी-कभी इसका परिणाम पीड़ा होता है; कभी-कभी यह पूर्ण विनाश की ओर ले जाता है। पवित्र ग्रंथ अक्सर इसका उल्लेख ईश्वर के "अपना चेहरा छिपाने" के रूप में करता है (यशायाह 59:2; भजन संहिता 30:7)। यह पीछे हटना क्रूरता का कार्य नहीं है, बल्कि मानवीय चुनाव की एक गंभीर स्वीकृति है। जिसे पवित्र ग्रंथ ईश्वर का क्रोध कहता है, वह अक्सर उनका यह दर्दनाक फैसला होता है कि लोगों को उन्हें अस्वीकार करने के परिणामों का अनुभव करने दें।

फिर भी इस सब में, ईश्वर विनाश में आनंद नहीं लेते। उन्हें दुष्ट के मरने में कोई आनंद नहीं होता, बल्कि वे चाहते हैं कि वे लौटें और जीएँ (यजेकिएल 18:23)। उनका धैर्य लोगों को पश्चाताप की ओर ले जाने के लिए है, निराशा की नहीं (रोमियों 2:4)।

ईश्वर हमारे बारे में बुरा भी नहीं सोचते, और न ही वे हमें दंडित करने की योजना बनाते हैं, जिसमें वे गुप्त रूप से हमारी गलतियों का विस्तृत लेखा-जोखा रखते हैं। कई विश्वासी इस डर में जीते हैं कि ईश्वर उनके पापों को इकट्ठा कर रहा है ताकि बाद में उनका इस्तेमाल उनके खिलाफ किया जा सके। पवित्र ग्रंथ हमें अलग बताता है। मसीह के माध्यम से, ईश्वर पूरी तरह से और निर्णायक रूप से क्षमा करता है। "मैं उनके अन्यायों की ओर दयालु रहूँगा, और मैं उनके पापों को फिर से याद नहीं करूँगा" (इब्रानियों 8:12)। जब ईश्वर क्षमा करता है, तो वे हमारे पापों को फिर से नहीं देखते, उनका उल्लेख नहीं करते, या हमारे सिर पर लटकाते नहीं हैं। कर्ज़ माफ़ हो गया (कुलुसियों 2:13-14)।

जो लोग अंत में खो जाते हैं, उनके लिए पवित्र ग्रंथ सिखाता है कि उनके पाप न्याय के दिन अवश्य प्रकट होंगे—लेकिन इसलिए नहीं कि ईश्वर ने उन्हें हथियार के रूप में रखा था। बल्कि, उनकी अपनी आत्मा उनके खिलाफ गवाही देगी। रोमियों 2:15 समझाता है कि उनकी आत्मा गवाही देती है, और उनके विचार उन्हें दोषी ठहराते या बहिष्कार करते हैं। उनका जीवन ही रिकॉर्ड बन जाता है, जो उन पापों द्वारा आकार दिया और दागदार किया गया है, जिन्हें उन्होंने चुना।

शुरू से अंत तक, ईश्वर की इच्छा हमें नुकसान पहुँचाने की नहीं बल्कि हमें चंगा करने की है। वे हमारे बारे में बुरा नहीं सोचते, न ही वे हमें पीड़ा देने की योजना बनाते हैं। उनकी चेतावनियाँ भी प्रेम के कार्य हैं। अब और हमेशा, ईश्वर हमारे भले की इच्छा रखते हैं, हमें विनाश से दूर और जीवन, दया और बहाली की ओर बुलाते हैं।

अध्याय ७ — ईश्वर अन्याय पर खुशी नहीं मनाता, बल्कि सच में खुशी मनाता है।

पवित्र ग्रंथ स्पष्ट रूप से प्रकट करता है कि ईश्वर पाप या अधर्म में आनंद नहीं लेता। पवित्र ग्रंथ हमें बताता है, "प्रेम अन्याय पर खुशी नहीं मनाता, बल्कि सच में खुशी मनाता है" (1 कुरिन्थियों 13:6, KJV)। चूंकि ईश्वर प्रेम है (1 यूहन्ना 4:8), यह छंद ईश्वर के बिल्कुल हृदय को दर्शाता है। पाप ईश्वर को खुशी नहीं देता; बल्कि, उन्हें पीड़ा और दुख पहुँचाता है।

उत्पत्ति 6 हमें यह बताने के लिए सबसे स्पष्ट चित्रों में से एक देता है कि मानव का पाप ईश्वर को कितना गहराई से प्रभावित करता है। "और ईश्वर ने देखा कि मनुष्य की दुष्टता पृथ्वी पर बहुत बढ़ गई थी, और उसके हृदय के विचारों की हर कल्पना लगातार केवल बुराई ही थी" (उत्पत्ति 6:5)। अगला छंद ईश्वर की भावनात्मक प्रतिक्रिया का खुलासा करता है: "और प्रभु को पछतावा हुआ कि उसने पृथ्वी पर मनुष्य को बनाया था, और उसका हृदय पीड़ित हुआ" (उत्पत्ति 6:6)। 'पीड़ित' शब्द एक मजबूत, गहरी भावना व्यक्त करता है—दर्द, दुख और परेशानी। यह हमें दिखाता है कि ईश्वर दूर या भावहीन नहीं हैं; जब मानवता लगातार उस पाप में गिर जाती है जिसे पवित्र ग्रंथ में अन्याय कहा जाता है, तो वे गहराई से प्रभावित होते हैं।

लेकिन पाप ईश्वर को इतनी गहराई से क्यों चोट पहुँचाता है? ऐसा इसलिए है क्योंकि ईश्वर जानते हैं कि पाप हमारे साथ क्या करता है। पाप जीवनों को नष्ट करता है, दिलों को भ्रष्ट करता है, और लोगों को उन आशीर्वादों से अलग करता है जो ईश्वर देना चाहते हैं। पाप अक्सर तुरंत आनंद का वादा करता है, लेकिन यह हमेशा दीर्घकालिक दर्द लाता है। जो क्षण भर के लिए आनंददायक लगता है, अंत में नुकसान, गुलामी और पीड़ा की ओर ले जाता है (रोमियों 6:23)। शैतान पाप को एक जाल के रूप में उपयोग करता है, अस्थायी संतुष्टि प्रदान करता है जबकि लोगों से शांति, उद्देश्य और आध्यात्मिक जीवन छीनता है। ईश्वर पीड़ित होते हैं क्योंकि वे परिणाम हमसे पहले देखते हैं।

इसके विपरीत, ईश्वर सच में खुशी मनाते हैं। सच ईश्वर के स्वभाव को दर्शाता है और लोगों को आज्ञादी और जीवन की ओर ले जाता है। यीशु ने खुद घोषित किया, "मैं मार्ग, सच और जीवन हूँ: कोई भी पिता के पास मेरे द्वारा नहीं आता" (यूहन्ना 14:6)। सच में जीना का मतलब मसीह में जीना है। मसीह के बाहर का जीवन शैतान के अस्थायी राज्य में बिताया गया जीवन है—एक जीवन जो कृत्रिम आनंद से शुरू हो सकता है लेकिन अंत में दर्द, खालीपन और पीड़ा पैदा करता है (यूहन्ना 10:10)।

चूंकि ईश्वर सच में खुशी मनाते हैं, वे सक्रिय रूप से उन लोगों की खोज करते हैं जो उसके अनुसार जीने की इच्छा रखते हैं। यीशु ने कहा, "लेकिन वह घड़ी आएगी, और अब है, जब सच्चे उपासक पिता की आत्मा और सच में उपासना करेंगे: क्योंकि पिता ऐसे लोगों की खोज करते हैं जो उसकी उपासना करें" (यूहन्ना 4:23)। उन्होंने आगे कहा, "ईश्वर आत्मा है: और जो लोग उसकी उपासना करते हैं, उन्हें आत्मा और सच में उसकी उपासना करनी चाहिए" (यूहन्ना 4:24)। यहाँ, यीशु मानव आत्मा का उल्लेख करते हैं, ईश्वर की आत्मा का नहीं। राजा जेम्ज संस्करण में, ईश्वर की आत्मा के लिए संदर्भों को आत्मा (S) के रूप में बड़ा किया जाता है, और मानव आत्मा को छोटे 's' से शुरू किया जाता है, खासकर नए नियम में।

आत्मा और सच में ईश्वर की उपासना करने का मतलब उनका इरादे से, संपूर्ण मन से, और प्रेम से पालन करना है। सच्ची उपासना सिर्फ शब्दों या अनुष्ठानों तक सीमित नहीं है; यह आज्ञापालन में बिताया गया जीवन है। यीशु ने कहा, "यदि तुम मुझसे प्रेम करते हो, तो मेरी आज्ञाओं का पालन करो" (यूहन्ना 14:15)। जो लोग सच में रहते हैं, वे डर के बजाय ईश्वर से प्रेम के कारण आज्ञापालन चुनते हैं। ऐसे जीवन ईश्वर के हृदय में खुशी लाते हैं, क्योंकि वे खुश होते हैं जब उनके बच्चे सच में चलते हैं (3 यूहन्ना 1:4)।

अध्याय ८ — ईश्वर सब कुछ सहता है, सब कुछ पर विश्वास करता है, सब कुछ की आशा करता है, सब कुछ बर्दाश्त करता है।

ईश्वर का वचन घोषित करता है, “प्रेम सब कुछ सहता है, सब कुछ पर विश्वास करता है, सब कुछ की आशा करता है, सब कुछ बर्दाश्त करता है” (1 कुरिन्थियों 13:7, KJV)। चूँकि ईश्वर प्रेम है (1 यूहन्ना 4:8), यह छंद न केवल यह बताता है कि प्रेम क्या करता है, बल्कि यह भी कि ईश्वर स्वयं मनुष्यता के प्रति क्या करते हैं। ये चार अभिव्यक्तियाँ ईश्वर के धैर्य, दया और हमारे कमज़ोरी में भी हमें बचाने की उनकी अडिग प्रतिबद्धता की गहराई को दर्शाती हैं।

ईश्वर सब कुछ सहता है: ईश्वर क्या सहता है? ईश्वर हमारे द्वारा किए गए हर पाप से होने वाले दर्द को सहता है। पाप केवल किसी नियम का उल्लंघन नहीं है; यह ईश्वर के हृदय को एक घाव है। पवित्र ग्रंथ दर्शाता है कि ईश्वर मानवीय अवज्ञा से गहराई से प्रभावित होते हैं। “मैं तुम्हारे नीचे दबा हुआ हूँ, जैसे एक गाड़ी दबी होती है जो फसलों के गट्टों से भरी हो” (अमोस 2:13)। हर तरह का पाप दुख पैदा करता है—चाहे वह विद्रोह, अहंकार, बेईमानी, या अविश्वास हो। एक प्रेम करने वाले पिता की तरह, ईश्वर इस दर्द को धैर्यपूर्वक सहता है, तत्काल न्याय के बजाय दया चुनता है। “प्रभु दयालु और कृपालु है, क्रोध में धीमा, और दया में प्रचुर है” (भजन संहिता 103:8)।

ईश्वर सब कुछ पर विश्वास करता है: पवित्र ग्रंथ यह क्यों कहता है कि ईश्वर “सब कुछ पर विश्वास करता है”? क्या ईश्वर हम पर विश्वास करते हैं? हाँ—आश्चर्यजनक रूप से, वे करते हैं। जब हम पाप करने के बाद उनके पास लौटते हैं और सच्चे पश्चाताप के साथ कहते हैं, “प्रभु, मैं यह फिर नहीं करूँगा,” तो ईश्वर हमें विश्वास करना चुनते हैं। यद्यपि वे हमारी मानवीय कमज़ोरी और फिर से गिरने की हमारी अतिसंवेदनशीलता जानते हैं, फिर भी वे विश्वास बढ़ाते हैं। “यदि हम अपने पापों को कबूल करते हैं, तो वह विश्वासयोग्य और धर्मी है कि हमें अपने पापों क्षमा करे और हमें सब अधर्म से शुद्ध करे” (1 यूहन्ना 1:9)। नासमझ बेटे के पिता की तरह, ईश्वर हमें खुली बाँहों के साथ शंका के बजाय स्वागत करते हैं (लूका 15:20)। उनका विश्वास अज्ञानता नहीं है—यह प्रेम है जो निंदा के बजाय दया चुनता है।

ईश्वर सब कुछ की आशा करता है: ईश्वर आशा क्यों करते हैं? जब हम पश्चाताप करते हैं लेकिन बाद में फिर से गिर जाते हैं, तो ईश्वर का हृदय दुखी होता है, फिर भी वे हमें नहीं छोड़ते। वे आशा करते हैं कि हम फिर से लौटेंगे। वे आशा करते हैं कि हम उनसे ईमानदारी से प्रेम करेंगे। वे हमारी बहाली, हमारे विकास, और उनके साथ हमारे अनंत जीवन की आशा करते हैं। “प्रभु अपने वादे के विषय में धीमा नहीं है... बल्कि हमारे प्रति धीरवान है, यह नहीं चाहता कि कोई नष्ट हो, बल्कि कि सभी पश्चाताप के लिए आएँ” (2 पतरस 3:9)। ईश्वर की आशा नष्ट करने की इच्छा पर नहीं, बचाने की इच्छा पर आधारित है। वे देखते हैं कि हम कृपा से क्या बन सकते हैं, तब भी जब हम बार-बार ठोकर खाते हैं।

ईश्वर सब कुछ बर्दाश्त करता है: ईश्वर सब कुछ क्यों बर्दाश्त करता है? क्योंकि वे जानते हैं कि उनके बिना धैर्य के, मानवता हमेशा के लिए खो जाएगी। यदि ईश्वर पाप के कारण होने वाले दुख और संघर्ष को धैर्यपूर्वक नहीं बर्दाश्त करते, तो न्याय शीघ्रता से आ जाता और कोई भी बच नहीं पाता। “यह प्रभु की दयाओं का कारण है कि हम नष्ट नहीं होते, क्योंकि उसकी करुणाएँ कभी समाप्त नहीं होतीं” (विलाप 3:22)। ईश्वर अस्वीकृति, अवज्ञा और अविश्वास को इसलिए बर्दाश्त करता है ताकि पापियों के पास लौटकर बचने का समय हो सके। अंत में, ईश्वर के सब कुछ बर्दाश्त करने का सबसे बड़ा प्रमाण क्रूस है, जहाँ मसीह ने हमारे पापों को उठाया ताकि हमारे पास अनंत जीवन हो सके (यशायाह 53:5; रोमियों 5:8)।

इन सब बातों में—सहना, विश्वास करना, आशा करना, और बर्दाश्त करना—हम एक ऐसे ईश्वर को देखते हैं जिसका प्रेम कभी हार नहीं मानता। उनका धैर्य कमज़ोरी नहीं है; यह काम पर लगी मुक्ति है। "प्रभु धीरवान और बहुत दयालु है" (गिनती 14:18)।

अध्याय ६ — ईश्वर कभी असफल नहीं होता / हार नहीं मानता ।

प्रेम कभी असफल नहीं होता । - 1 कुरिन्थियों 13:8

ईश्वर का प्रेम कभी असफल नहीं होता । एक अन्य NIV पवित्र ग्रंथ का अनुवाद कहता है, "प्रेम हार नहीं मानता ।" इसका मतलब है कि ईश्वर का हमारे प्रति प्रेम समय, निराशा या मानवीय अविश्वास के साथ कमज़ोर नहीं पड़ता ।

यह कहना कि ईश्वर हम पर हार नहीं मानते, इसका मतलब है कि उनका प्रेम हमारे प्रति अटल, दृढ़ और अनंत है । पवित्र ग्रंथ घोषित करता है, "प्रभु की अटल प्रेम कभी समाप्त नहीं होती; उसकी दयाएँ कभी खत्म नहीं होतीं" (विलाप 3:22)। समय की शुरुआत से लेकर अब तक, ईश्वर ने कभी भी एक वफ़ादार हृदय के साथ मानवता का पीछा नहीं छोड़ा है ।

हज़ारों वर्षों से, एक आध्यात्मिक युद्ध चल रहा है—जो कि मनुष्य के हाथों से लड़े गए किसी भी युद्ध से कहीं अधिक वास्तविक और तीव्र है । यह लड़ाई मांस और रक्त के हथियारों से नहीं लड़ी जाती, बल्कि विश्वास, सच और वफ़ादारी के क्षेत्र में लड़ी जाती है । पवित्र ग्रंथ हमें याद दिलाता है, "हम मांस और रक्त के विरुद्ध नहीं लड़ते, बल्कि सामर्थ्यों के विरुद्ध, शक्तियों के विरुद्ध, इस संसार के अंधकार के शासकों के विरुद्ध लड़ते हैं" (इफिसियों 6:12)। ईश्वर ने दो हज़ार साल पहले यीशु मसीह के माध्यम से क्रूस पर शैतान को निर्णायक रूप से पराजित किया (कुलुसियों 2:15)। उस विजय ने ईश्वर की धार्मिकता और प्रेम के प्रश्न को हमेशा के लिए सुलझा दिया ।

ईश्वर की ईमानदार इच्छा अपने हर एक व्यक्तिगत बच्चे को जीतने की है—बल से नहीं, बल्कि प्रेम से । वह हर व्यक्ति के लिए लंबा है कि वह उनके राज्य को स्वेच्छा से चुने । "प्रभु अपने वादे के विषय में धीमा नहीं है... बल्कि हमारे प्रति धीरवान है, यह नहीं चाहता कि कोई नष्ट हो" (2 पतरस 3:9)। उनका प्रेम बहुत अंत तक बना रहता है ।

दूसरी ओर, शैतान अपनी सारी शक्ति का उपयोग एक केंद्रीय सच पर हमला करने के लिए करता है: ईश्वर के स्वभाव पर । वह बिना थके यह कहानी के लिए काम करता है कि हमें ईश्वर पर विश्वास न हो कि वह प्रेम करने वाला, धैर्यवान, कृपालु, कृपाशील, भलाई में प्रचुर, और वफ़ादार है । यीशु ने जब कहा, "वह एक झूठा है, और उसका पिता भी" (यूहन्ना 8:44), तो उन्होंने शैतान के स्वभाव को स्पष्ट रूप से प्रकट किया । शैतान का सबसे बड़ा हथियार छल है—लोगों को यह विश्वास दिलाना कि ईश्वर पर भरोसा नहीं किया जा सकता ।

इसीलिए विश्वास की परीक्षा होती है । अय्यूब का विश्वास गंभीर रूप से परखा गया क्योंकि शैतान ने ईश्वर पर आरोप लगाया कि वह वास्तविक प्रेम के लायक नहीं है (अय्यूब 1:9–11)। फिर भी संघर्ष के दौरान, अय्यूब ने घोषित किया, "भले ही वह मुझे मार डाले, तब भी मैं उस पर भरोसा करूँगा" (अय्यूब 13:15)। यीशु स्वयं चरम सीमा तक परखे गए । क्रूस पर, उन्होंने चिल्लाया, "हे मेरे ईश्वर, हे मेरे ईश्वर, तूने मुझे क्यों छोड़ दिया?" (मत्ती 27:46)। ये शब्द इसलिए नहीं बोले गए थे क्योंकि यीशु शैतान के झूठ पर विश्वास करते थे, बल्कि इसलिए कि उन्होंने मानवीय पीड़ा, डर और संघर्ष के साथ पूरी तरह से एक होना चुना । उन्होंने हमारे द्वारा अनुभव किए गए सबसे गहरे अंधकार में प्रवेश किया ताकि हमें उसका सामना अकेले न करना पड़े ।

यीशु के अंतिम शब्द विश्वास की अंतिम प्रतिक्रिया का प्रकट करते हैं: "पिता, मैं अपनी आत्मा को तेरे हाथों में सौंपता हूँ" (लूका 23:46)। उस क्षण, यीशु ने हमें दिखाया कि जब डर, संदेह और दबाव हमें घेर लें तो क्या करना चाहिए—पिता पर पूरी

तरह भरोसा करना। ये शब्द "पिता, मैं अपनी आत्मा को तेरे हाथ में सौंपता हूँ" आत्मसमर्पण, विश्वास और प्रेम की घोषणा है: तू मेरा पिता है। मैं तुझ पर विश्वास करता हूँ। मैं अपना जीवन और अपना भविष्य तेरे हाथों में रखता हूँ।

यदि कोई मनुष्य अंत में अनंत जीवन खो देता है, तो यह कभी भी इसलिए नहीं होगा कि ईश्वर ने हार मान ली। पवित्र ग्रंथ स्पष्ट है: "ईश्वर ने संसार से इतना प्रेम किया कि उसने अपना एकमात्र पुत्र दिया" (यूहन्ना 3:16)। कई लोग अपना अनंत जीवन इसलिए खो देंगे क्योंकि वे अपने लिए ईश्वर के प्रेम पर भरोसा करने के बजाय ईश्वर के बारे में शैतान के झूठ पर विश्वास करना चुनते हैं। प्रेम (ईश्वर) हार नहीं मानता—लेकिन हमें उन्हें (ईश्वर को) हर चीज़ से ऊपर चुनना होगा।

जो ईश्वर प्रेम है, वह सबसे महान चीज़ है जिसे हम मनुष्य कभी भी अनुभव कर सकते हैं। अगले अध्याय में, हम देखेंगे कि प्रेम विश्वास, आशा और जीवन की हर अन्य चीज़ से क्यों बड़ा है।

अध्याय १० — इनमें से सबसे बड़ा प्रेम है

"और अब विश्वास, आशा, प्रेम, ये तीन बनी रहती हैं; परन्तु इनमें से सबसे बड़ा प्रेम है।"— 1 कुरिन्थियों 13:13

प्रेरित पौलुस के ये शब्द हमें उस चीज़ की ओर इशारा करते हैं जो तब बचती है जब बाकी सब कुछ मिट जाता है। - प्रेम - वह अगापे प्रेम। विश्वास, आशा, और प्रेम अस्थायी गुण नहीं हैं जो केवल जीवन के कुछ ऋतुओं के लिए हों; वे अटल हैं। वे "बने रहते हैं।" वे इसलिए बने रहते हैं क्योंकि वे ईश्वर के स्वभाव में और उस जीवन में निहित हैं जिसे वह अपने लोगों को जीने के लिए कहता है। फिर भी इन तीन अटल अनुग्रहों में, पौलुस साहसपूर्वक घोषित करते हैं कि प्रेम बाकी सबसे ऊपर है—इसलिए नहीं कि विश्वास और आशा अपर्याप्त हैं, बल्कि इसलिए कि प्रेम सब कुछ आगे बढ़ाता है, पूरा करता है, और उन्हें पूर्ण करता है।

विश्वास क्यों बना रहता है? विश्वास इसलिए बना रहता है क्योंकि मानवता हमेशा ईश्वर पर भरोसा करने के लिए बुलाई जाएगी। विश्वास वह हाथ है जो उस ओर बढ़ता है जो अभी तक नहीं दिखा। "अब विश्वास उन बातों का तत्व है जिनकी आशा की जाती है, और उन बातों का प्रमाण है जो दिखाई नहीं देती" (इब्रानियों 11:1)। जब परिस्थितियाँ अनिश्चित होती हैं और शक्ति कमज़ोर महसूस होती है, तो यह विश्वासी को सच में स्थिर करता है। विश्वास के माध्यम से, हम ईश्वर को जानते हैं, उनके वादों पर भरोसा करते हैं, और तब भी आगे बढ़ते हैं जब मार्ग स्पष्ट न हो। "बिना विश्वास के ईश्वर को प्रसन्न करना असंभव है" (इब्रानियों 11:6), क्योंकि विश्वास वह तरीका है जिससे हम उनके साथ एक रिश्ते में प्रवेश करते हैं। फिर भी विश्वास स्वयं हमेशा अपने आप से आगे इशारा करता है—उस एक की ओर जिस पर हम भरोसा करते हैं।

आशा क्यों बनी रहती है? आशा इसलिए बनी रहती है क्योंकि मानव हृदय आगे देखने के लिए बना है। पवित्र ग्रंथ हमें बताता है, "आशा के टल जाने से हृदय बीमार हो जाता है: परन्तु जब इच्छा पूरी होती है, तो वह जीवन का वृक्ष है" (भजन संहिता 13:12)। आशा हमारी आँखों को वर्तमान पीड़ा से ऊपर उठाती है और हमें याद दिलाती है कि ईश्वर की कहानी समाप्त नहीं हुई है। यह हमें प्रतीक्षा में बनाए रखती है और परीक्षाओं में हमें स्थिर करती है। पौलुस लिखते हैं, "क्योंकि हम आशा से बचे हैं: परन्तु जो आशा दिखाई देती है, वह आशा नहीं है" (रोमियों 8:24)। विश्वास की तरह, आशा आगे बढ़ती है, भविष्य से जीवन खींचती है जिसे ईश्वर ने वादा किया है लेकिन अभी तक पूरी तरह से प्रकट नहीं किया है।

प्रेम क्यों बना रहता है और सबसे महान है? प्रेम इसलिए बना रहता है क्योंकि प्रेम अनंत है। आखिरकार, हमारा ईश्वर अनंत है। विश्वास भरोसा करता है। आशा की प्रत्याशा करती है। लेकिन प्रेम हमेशा कार्य में होता है - यह अधिक जीवंत, रंगीन और जोरदार है। प्रेम केवल ईश्वर की ओर नहीं बढ़ता जैसा हम विश्वास में करते हैं या उसके करने वाली चीज़ की ओर देखता है जैसा हम आशा में करते हैं; बल्कि प्रेम ईश्वर के स्वभाव में भाग लेता है। पवित्र ग्रंथ स्पष्ट रूप से घोषित करता है, "ईश्वर प्रेम है" (1 यूहन्ना 4:8)। विश्वास और आशा ईश्वर की प्रतिक्रियाएँ हैं, लेकिन प्रेम उनके स्वभाव का सार है जिसे हम यीशु के माध्यम से अनुभव करते हैं और उनके प्रेम के जवाब में व्यक्त करते हैं।

प्रेम सबसे महान है क्योंकि यह ईश्वर का सार है, और सभी सच्ची क्रियाओं के पीछे की प्रेरणा शक्ति है, जिससे यह सर्वोच्च, सबसे पूर्ण गुण बनता है। वास्तव में, ईश्वर के पवित्र आत्मा का फल प्रेम है और प्रेम से ही अन्य आठ गुण निकलते हैं — आनंद, शांति, धैर्य, कोमलता, भलाई, विश्वास, नम्रता, संयम: ऐसे गुणों के विरुद्ध कोई कानून नहीं है (गलातियों 5:22)। याद रखें यह पवित्र आत्मा का फल है, एकवचन में। पवित्र आत्मा के फल नहीं।

इसके अलावा "प्रेम में कोई डर नहीं है; परन्तु पूर्ण प्रेम डर को बाहर निकाल देता है: क्योंकि डर में यातना है। जो डरता है, वह प्रेम में पूर्ण नहीं हुआ है। (1 यूहन्ना 4:18)। इसके अलावा, प्रेम विश्वास और आशा को अर्थ देता है। "यदि मेरा सारा विश्वास है, कि मैं पहाड़ों को हटा सकूँ, और यदि मेरे पास प्रेम नहीं है, तो मैं कुछ भी नहीं हूँ" (1 कुरिन्थियों 13:2)। बिना प्रेम के विश्वास कठोर विश्वास बन जाता है। बिना प्रेम की आशा स्वार्थी लालसा बन जाती है। प्रेम सुनिश्चित करता है कि विश्वास करुणा के माध्यम से व्यक्त होता है और आशा दृढ़ता को केवल हमारे लिए ही नहीं, बल्कि दूसरों के लिए भी बढ़ावा देती है। जैसा कि पौलुस ने कहीं और लिखा है, "एकमात्र चीज़ जो मायने रखती है वह है विश्वास जो प्रेम के माध्यम से व्यक्त होता है" (गलातियों 5:6)।

पौलुस का यह बयान विश्वास या आशा को कम करने के लिए नहीं है, बल्कि प्रेम को ईसाई जीवन की सर्वोच्च आह्वान के रूप में ऊँचा उठाने के लिए है। यीशु स्वयं ने इसकी पुष्टि की जब उन्होंने कहा, "इससे सब लोग जानेंगे कि तुम मेरे चेले हो, यदि तुम में एक-दूसरे से प्रेम करोगे" (यूहन्ना 13:35)। प्रेम वह प्रमाण है कि विश्वास जीवित है और आशा सच्ची है। यह ईश्वर को सबसे स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित करता है, अनंत काल तक बना रहता है, और जिसे भी छूता है उसे बदल देता है। अगले अध्याय में, हम सीखेंगे कि यीशु हमें एक-दूसरे से प्रेम क्यों करने के लिए कह रहे हैं।

अध्याय ११ — अपने सारे दिल, मन, आत्मा और बल से प्रभु से प्रेम करना

बचपन में, हम में से ज्यादातर लोग हर शाम दरवाज़े पर इंतज़ार करते थे कि हमारे पिता काम से घर आएँगे। हमारा इंतज़ार करने का मुख्य कारण उपहारों या किसी बदले की अपेक्षा नहीं होता था, बल्कि सिर्फ इसलिए होता था कि हम अपने पिता से प्रेम करते थे। जब पापा आखिरकार थके-हारे और धूल से सने हुए आए, तो हम बच्चे उनकी बांहों में दौड़ जाते थे। उस आलिंगन में, हमारे पिता की थकान दूर हो जाती थी, और उनके चेहरे पर खुशी छा जाती थी जब वे हमें अपनी बांहों में कसकर भर लेते थे। हमारी मुस्कान, खुशियों से भरा चेहरा और बचपन की मासूमियत उनके दिलों को गहराई से छू जाती थी—यह इसलिए नहीं कि यह बिल्कुल सही था, बल्कि इसलिए कि यह सच्ची और दिल से थी।

इसी तरह, ईश्वर हमारे प्रेम की तलाश करते हैं। उन्हें बेदाग या निर्दोष भक्ति नहीं चाहिए, बल्कि एक ऐसा तैयार हृदय जो उनकी ओर दौड़ता है। वे इस प्रेम में बहुत आनंदित होते हैं। यही वजह है कि हमें प्रभु से प्रेम करने के लिए बुलाया गया है।

यीशु ने सिखाया कि ईश्वर से प्रेम सभी आज्ञाओं में सबसे महान है। जब उनसे पूछा गया कि कौन सी आज्ञा सबसे महत्वपूर्ण है, तो उन्होंने जवाब दिया:

"तुम्हें अपने प्रभु ईश्वर से अपने सारे दिल, सारी आत्मा, सारे मन और सारे बल से प्रेम करना चाहिए।" (मरकुस 12:30)

यह आज्ञा कोई बोझ नहीं है; यह एक निमंत्रण है। ईश्वर हमारा कोई हिस्सा नहीं माँगते—वे हमारा सब कुछ चाहते हैं क्योंकि उन्होंने हमारा सब कुछ बनाया है। ईश्वर से पूरी तरह प्रेम करना हमारे जीवन को उस उद्देश्य के साथ मेल खाता है जिसके लिए हम बनाए गए थे। जब हमारा दिल, मन, आत्मा और बल उन पर केंद्रित होता है, तो बाकी सब कुछ अपनी सही जगह पर आ जाता है।

अब आइए देखें कि हम अपने स्वर्गीय पिता से अपने सारे दिल, सारी आत्मा, सारे मन और सारे बल से प्रेम कैसे कर सकते हैं।

● अपने सारे दिल से ईश्वर से प्रेम करना।

अपने सारे दिल से ईश्वर से प्रेम करने का मतलब है उन्हें अपनी सबसे गहरी आत्मीयता, इच्छाओं और वफ़ादारी देना। दिल उस चीज़ का प्रतीक है जिसे हम सबसे ज़्यादा खज़ाना करते हैं। ईश्वर बहुत सारे प्रेमों में से एक प्रेम नहीं बनना चाहते; वे हमारा सबसे बड़ा प्रेम बनना चाहते हैं।

"इससे भी बढ़कर, अपने दिल की रक्षा करो, क्योंकि जीवन की सारी गतिविधियाँ उसी से निकलती हैं।" (भजन संहिता 4:23)

जब हमारा दिल ईश्वर को समर्पित हो जाता है, तो हमारे निर्णय उनकी इच्छा को दर्शाने लगते हैं। हम उन्हें प्रसन्न करने का प्रयास डर से नहीं, बल्कि प्रेम से करते हैं, जिस तरह एक बच्चा प्रेम करने वाले माता-पिता को प्रसन्न करना चाहता है।

● अपने सारे मन से ईश्वर से प्रेम करना।

अपने मन से ईश्वर से प्रेम करने का मतलब है उनके बारे में सोचना, उनके वचन को सीखना, और अपने विचारों को उनके सच के अनुसार बदलना का विकल्प चुनना। विश्वास अंधा नहीं होता; यह सोचा-विचारा और जानबूझकर किया जाता है।

"इस युग के अनुसार अपने आपको न ढालो, परन्तु अपने मन के नवीनीकरण से बदल जाओ।"
(रोमियों 12:2)

जैसे-जैसे हम पवित्र ग्रंथ पर ध्यान देते हैं, ईश्वर की भलाई पर विचार करते हैं, और अपने विचारों पर नियंत्रण रखते हैं, हमारा प्रेम और गहरा होता जाता है। हमारा मन एक ऐसी जगह बन जाता है जहाँ विश्वास मज़बूत होता है और भरोसा कायम होता है।

- अपनी सारी आत्मा से ईश्वर से प्रेम करना।

हमारी आत्मा हमारे आंतरिक स्वभाव को दर्शाती है—हमारी पहचान, भावनाएँ, और आध्यात्मिक जीवन। अपनी आत्मा से ईश्वर से प्रेम करने का मतलब है उन पर इस बात का भरोसा करना कि हम कौन हैं और हम क्या बनने वाले हैं।

"हे मेरी आत्मा, प्रभु का धन्यवाद कर, और उसके सभी उपकारों को न भूल।"
(भजन संहिता 103:2)

यह प्रेम उपासना, कृतज्ञता, पश्चात्ताप और ईश्वर पर निर्भरता में व्यक्त होता है। यह वह शांत विश्वास है कि हमारा जीवन उनके हाथों में सुरक्षित है।

- अपने सारे बल से ईश्वर से प्रेम करना।

अपने बल से ईश्वर से प्रेम करने का मतलब है उन्हें अपने कार्य, समय, ऊर्जा और क्षमताएँ समर्पित करना। यह वह प्रेम है जो शब्दों से आगे बढ़कर आज्ञापालन में परिवर्तित हो जाता है।

"जो कुछ भी तुम करो, वह सब ईश्वर की महिमा के लिए करो।"
(1 कुरिन्थियों 10:31)

दूसरों की सेवा करना, ईमानदारी से जीवन जीना, कठिनाइयों में विश्वास में दृढ़ रहना—ये सभी अपने बल से ईश्वर से प्रेम करने के अभिव्यक्तियाँ हैं। हमारा दैनिक जीवन उपासना के कार्य बन जाता है।

हम इसलिए ईश्वर से प्रेम करते हैं क्योंकि उन्होंने हमसे पहले प्रेम किया (1 यूहन्ना 4:19)। जब हम क्रूस पर विचार करते हैं, तो हम यीशु मसीह के माध्यम से ईश्वर के प्रेम की गहराई देखते हैं। उनकी कृपा को समझने से हमारे अंदर बदले में प्रेम जागृत होता है। प्रार्थना, पवित्र ग्रंथ, उपासना और आज्ञापालन ईश्वर के प्रेम को कमाने के तरीके नहीं हैं—ये उस प्रेम पर हमारी प्रतिक्रिया के तरीके हैं।

ईश्वर दूर या उदासीन नहीं हैं। पवित्र ग्रंथ हमें दिखाता है कि वे अपने लोगों में आनंद लेते हैं और उन पर खुश होते हैं। "तुम्हारा प्रभु ईश्वर तुम्हारे बीच में है... वह तुम पर खुशी से आनंदित होगा; वह अपने प्रेम से तुम्हें शांत करेगा।" (सफन्याह 3:17)

जब हम सच्चे मन से—भले ही अपूर्ण रूप से—ईश्वर से प्रेम करते हैं, तो वे उसे खुशी के साथ स्वीकार करते हैं। जैसे एक माता-पिता अपने बच्चे के सादे प्रेम के अभिव्यक्ति को खज़ाना करते हैं, उसी तरह ईश्वर हमारी भक्ति का सम्मान करते हैं। हमारी प्रार्थनाएँ, उपासना और आज्ञापालन उनके सामने एक स्वीकार्य भेंट के रूप में प्रस्तुत होते हैं।

अपने सारे दिल, मन, आत्मा और बल से प्रभु से प्रेम करना जीवन के हर क्षेत्र को बदल देता है। डर की जगह विश्वास आ जाता है, भ्रम की जगह उद्देश्य, और खालीपन की जगह आशा। यह प्रेम कोई एक क्षण नहीं, बल्कि ईश्वर के और करीब आने की एक जीवन भर की यात्रा है।

"तुम मुझे ढूँढ़ोगे और पाओगे, जब तुम मुझे अपने सारे दिल से ढूँढ़ोगे।" (यिर्मयाह 29:13) आशा है कि हमारा जीवन इस एकनिष्ठ प्रेम को प्रतिबिंबित करे—एक ऐसा प्रेम जिसे ईश्वर न केवल स्वीकार करें, बल्कि जिसमें वे आनंदित भी हों।

अगले अध्याय में, हम देखेंगे कि एक-दूसरे से प्रेम करना कैसे अप्रत्यक्ष रूप से ईश्वर से प्रेम करना है।

अध्याय १२ — एक-दूसरे से प्रेम करो

प्रेम ईसाई विश्वास के बिल्कुल केंद्र में है। यह केवल एक भावना या एहसास नहीं है, बल्कि ईश्वर की आज्ञापालन और दूसरों की देखभाल में निहित एक जानबूझकर जीने का तरीका है। यीशु ने इसे बिल्कुल स्पष्ट कर दिया जब उन्होंने कहा, "मैं तुम्हें एक नई आज्ञा देता हूँ, कि तुम एक-दूसरे से प्रेम करो; जैसे मैंने तुमसे प्रेम किया है, वैसे ही तुम भी एक-दूसरे से प्रेम करो" (यूहन्ना 13:34)। यह आज्ञा प्रेम को एक सुझाव से एक पवित्र जिम्मेदारी तक बढ़ा देती है, जो मसीह के अपने निस्वार्थ प्रेम पर आधारित है जो उन्होंने हमारे प्रति किया।

एक-दूसरे से प्रेम करने का मतलब है दूसरों को ईश्वर की दृष्टि से देखना। यह विश्वासियों को करुणा, धैर्य, नम्रता और क्षमा के साथ कार्य करने के लिए कहता है। प्रेरित पौलुस इस प्रेम को व्यावहारिक शब्दों में वर्णित करते हैं: "प्रेम धीरवान है, और कृपालु है; प्रेम ईर्ष्या नहीं करता, प्रेम डींग नहीं मारता, नहीं फूलता" (1 कुरिन्थियों 13:4)। सच्चा प्रेम केवल शब्दों में ही नहीं, बल्कि लगातार किए जाने वाले ऐसे कार्यों में प्रकट होता है जो कृपा और दया को दर्शाते हैं, तब भी जब यह करना कठिन हो।

यीशु ने केवल दोस्तों के प्रति ही नहीं, बल्कि अस्वीकृत लोगों, टूटे हुए लोगों और यहाँ तक कि अपने शत्रुओं के प्रति भी प्रेम का प्रदर्शन किया। उन्होंने सिखाया, "अपने शत्रुओं से प्रेम करो, अपने श्राप देने वालों को आशीर्वाद दो, अपने घृणा करने वालों के साथ अच्छा करो" (मत्ती 5:44)। ऐसा प्रेम मानवीय शक्ति से परे है; यह ईश्वर के आत्मा द्वारा संचालित होता है। जब विश्वासी क्रोध के बजाय प्रेम, कड़वेपन के बजाय क्षमा चुनते हैं, तो वे दुनिया के सामने मसीह के स्वभाव को प्रतिबिंबित करते हैं।

पवित्र ग्रंथ सिखाता है कि प्रेम सच्चे विश्वास का प्रमाण है। "इससे सब लोग जानेंगे कि तुम मेरे चले हो, यदि तुम में एक-दूसरे से प्रेम करोगे" (यूहन्ना 13:35)। हमारा गवाही केवल सिद्धांतों या धार्मिक गतिविधियों से नहीं, बल्कि इस बात से स्थापित होती है कि हम एक-दूसरे का व्यवहार कैसे करते हैं। प्रेम मसीह के शरीर के भीतर एकता का निर्माण करता है और विश्वास के बाहर लोगों के लिए एक शक्तिशाली गवाही के रूप में काम करता है।

एक-दूसरे से प्रेम करने में एक-दूसरे के बोझ उठाना भी शामिल है। पवित्र ग्रंथ विश्वासियों को समर्थन और नम्रता के साथ एक साथ चलने के लिए प्रोत्साहित करता है: "एक-दूसरे के बोझ उठाओ, और इस प्रकार मसीह के नियम को पूरा करो" (गलातियों 6:2)। कमज़ोरी, दुख या असफलता के क्षणों में, प्रेम निंदा के बजाय बहाली के साथ प्रतिक्रिया करता है।

इस प्रेम का स्रोत ईश्वर स्वयं हैं। "हम उससे प्रेम करते हैं, क्योंकि उसने पहले हमसे प्रेम किया" (1 यूहन्ना 4:19)। यीशु मसीह के बलिदान के माध्यम से प्रकट हुए ईश्वर के प्रेम, विश्वासियों को बलिदान के साथ दूसरों से प्रेम करने में सक्षम बनाता है। जैसे-जैसे हम ईश्वर के प्रेम में निहित रहते हैं, हम उसी प्रेम को स्वतंत्र रूप से और ईमानदारी से फैलाने के लिए मजबूत होते हैं।

एक ऐसी दुनिया में जो अक्सर बंटवारे, स्वार्थ और संघर्ष से भरी है, एक-दूसरे से प्रेम करने का आह्वान समयविशेष और तत्कालिक बना हुआ है। जब विश्वासी प्रेम चुनते हैं, तो वे मसीह के प्रकाश को प्रतिबिंबित करते हैं और उनकी सबसे बड़ी आज्ञा को पूरा करते हैं। जैसा कि पवित्र ग्रंथ हमें याद दिलाता है, "सबसे बढ़कर, अपने में जबरदस्त प्रेम रखो: क्योंकि प्रेम पापों की बहुतायत को ढाँप देगा" (1 पतरस 4:8)। सबसे बढ़कर, प्रेम वह बंधन है जो हमें एक साथ रखता है और दुनिया को वापस ईश्वर की ओर ले जाता है।

लेकिन अगले अध्याय में, हम सीखेंगे कि क्या बात है जो अरबों लोगों को ईश्वर के प्रेम को अपने बीच अनुभव करने से रोक रही है।

अध्याय १३ — संसार का प्रेम।

प्रेम एक शक्तिशाली बल है जिसे ईश्वर ने मानव हृदय में रखा है। जिसे हम प्रेम करना चुनते हैं, वह अंत में हमारे जीवन, मूल्यों और अनंत भाग्य को आकार देता है। पवित्र ग्रंथ बार-बार विश्वासियों को गलत जगह प्रेम करने के बारे में चेतावनी देता है—विशेष रूप से संसार के प्रेम के बारे में। जबकि ईश्वर ने संसार को बनाया है और मानवता से गहरा प्रेम करता है, ईश्वर अपने पवित्र ग्रंथ में लोगों से प्रेम करने और एक सांसारिक प्रणाली को अपनाने के बीच एक स्पष्ट अंतर बताता है जो ईश्वर के विरोध में खड़ी है।

यह अंतर को समझना हर उस विश्वासी के लिए आवश्यक है जो ईश्वर को प्रसन्न करने वाला जीवन जीना चाहता है।

जब पवित्र ग्रंथ "संसार" की बात करता है, तो यह हमेशा भौतिक पृथ्वी या मानवता का उल्लेख नहीं करता है। अक्सर, यह मूल्यों, इच्छाओं और प्राथमिकताओं की एक प्रणाली को संदर्भित करता है जो ईश्वर को बाहर रखती है और स्वयं, आनंद, अहंकार और भौतिकवाद को बढ़ावा देती है।

"संसार से प्रेम मत करो और न ही संसार की वस्तुओं से। यदि कोई संसार से प्रेम करता है, तो पिता का प्रेम उसमें नहीं है।" — 1 यूहन्ना 2:15 (NKJV)

यह छंद हमें बताता है कि संसार के प्रेम और ईश्वर के प्रेम एक ही हृदय में एक साथ नहीं रह सकते। क्योंकि संसार ईश्वर की आज्ञापालन के बिना संतुष्टि, धार्मिकता के बिना सफलता, और पवित्रता के बिना आनंद को बढ़ावा देता है। यह सांसारिक प्रणाली सूक्ष्म रूप से हृदय को ईश्वर की भक्ति से दूर ले जाती है।

● सांसारिक प्रेम के तत्व

प्रेरित यूहन्ना सांसारिक प्रेम को परिभाषित करने वाले तीन मुख्य तत्वों की पहचान करते हैं:

"क्योंकि जो कुछ भी संसार में है—वह देह की इच्छा, आँखों की इच्छा, और जीवन का अहंकार—पिता का नहीं है, बल्कि संसार का है।" — 1 यूहन्ना 2:16

● देह की इच्छा

यह उन पापी लालसाओं और इच्छाओं को संदर्भित करता है जो शरीर को ईश्वर की इच्छा के बिना संतुष्ट करने का प्रयास करती हैं। इसमें यौन अशुद्धि, अति और ऐसी आदतें शामिल हैं जो आत्म-नियंत्रण को आत्म-आनंद से बदल देती हैं।

● आँखों की इच्छा

इसमें लालच शामिल है—वह चाहना जो हम देखते हैं लेकिन जिसकी हमें ज़रूरत नहीं है या जो ईश्वर ने हमें नहीं दिया है। यह लोभ, ईर्ष्या और असंतोष को बढ़ावा देता है।

● जीवन का अहंकार

यह स्थिति, शक्ति, मान्यता और आत्म-प्रशंसा की खोज है। यह महिमा को ईश्वर से हटाकर मानवीय उपलब्धि पर रख देता है।

ईश्वर से प्रेम करने और संसार से प्रेम करने के बीच का संघर्ष विश्वासियों के सामने आने वाली सबसे बड़ी आध्यात्मिक लड़ाइयों में से एक है। पवित्र ग्रंथ स्पष्ट रूप से कहता है कि संसार का प्रेम कोई हानिरहित स्नेह नहीं है, बल्कि एक ऐसी शक्ति है जो सीधे ईश्वर की भक्ति के साथ प्रतिस्पर्धा करती है। पवित्र ग्रंथ बार-बार विश्वासियों को अपनी इच्छाओं, वफ़ादारी और जीवन शैली की जाँच करने के लिए कहता है, ईश्वर के बच्चों के रूप में अपनी पहचान के प्रकाश में।

प्रेरित याकूब हमारे भीतर और आसपास के कई संघर्षों की जड़ का पर्दाफाश करते हैं: "तुममें युद्ध और झगड़े कहाँ से आते हैं? क्या वे तुम्हारे उन सुखों की इच्छाओं से नहीं आते हैं जो तुम्हारे अंगों में युद्ध करती हैं?" — याकूब 4:1

संसार का प्रेम दिल से शुरू होता है। सांसारिक इच्छाएँ—स्वार्थी महत्वाकांक्षा, ईर्ष्या, अहंकार, और आनंद—न केवल लोगों के बीच, बल्कि मानवता और ईश्वर के बीच भी संघर्ष पैदा करती हैं। दुनिया के लोग हमेशा अपने जीवन को धार्मिक जीवन जीने से होने वाली किसी भी असुविधा से बचाते हैं।

लेकिन यीशु कहते हैं, "जो कोई अपने जीवन को बचाना चाहेगा, वह उसे खो देगा; और जो कोई मेरे लिए अपना जीवन खोएगा, वह उसे पाएगा। क्योंकि यदि कोई मनुष्य सारी दुनिया पा ले, और अपने जीवन को खो दे, तो उसे क्या लाभ होगा? या मनुष्य अपने जीवन के बदले क्या देगा?" मत्ती 16:25,26

सांसारिक प्रेम के सबसे बड़े भ्रमों में से एक स्थायित्व का भ्रम है। संसार संतुष्टि का वादा करता है लेकिन अनंत संतुष्टि नहीं दे सकता। पवित्र ग्रंथ कहते हैं "और संसार नाश हो रहा है, और उसकी इच्छा भी; परन्तु जो कोई ईश्वर की इच्छा करता है, वह सदैव बना रहता है।"

— 1 यूहन्ना 2:17

जो कुछ भी संसार प्रदान करता है—धन, प्रसिद्धि, आनंद और शक्ति—अस्थायी है। संसार से प्रेम करना दिल को उस चीज़ से बाँध देता है जो मिट रही है, जबकि ईश्वर से प्रेम करना आत्मा को उस चीज़ में स्थिर करता है जो अनंत है। पवित्र ग्रंथ विभाजित वफ़ादारी के बारे में दृढ़ता से बोलता है। ईश्वर से पूरी तरह प्रेम करना और सांसारिक मानसिकता को थामे रहना असंभव है। "क्या तुम नहीं जानते कि दुनिया के साथ दोस्ती ईश्वर के साथ शत्रुता है? इसलिए, जो कोई भी दुनिया का दोस्त बनना चाहता है, वह खुद को ईश्वर का शत्रु बना लेता है।"

— याकूब 4:4

इसका मतलब यह नहीं है कि विश्वासी समाज से अलग हो जाएँ, बल्कि इसका मतलब है कि वे इसके अधार्मिक मूल्यों को अपनाने से इनकार करते हैं। ईसाइयों को दुनिया में रहने के लिए बुलाया गया है, लेकिन दुनिया के नहीं होने के लिए।

संसार के प्रेम से मुक्ति एक बदले हुए मन से शुरू होती है। ईश्वर अपने लोगों को सोचने और जीने का एक उच्च तरीका देता है। संत पौलुस कहते हैं "और इस युग के अनुसार अपने आप को न ढालो, परन्तु अपने मन के नवीनीकरण से बदल जाओ, ताकि तुम उस अच्छी, और स्वीकार्य, और पूर्ण ईश्वर की इच्छा को सिद्ध कर सको।" — रोमियों 12:2

जैसे-जैसे ईश्वर का वचन हमारी सोच को फिर से आकार देता है, हमारी इच्छाएँ बदल जाती हैं। जो एक समय हमें आकर्षित करता था, वह अपनी पकड़ खो देता है, और जो ईश्वर को प्रसन्न करता है, वह हमारी खुशी बन जाता है।

यीशु ने हमें सिखाया कि वास्तविक सुरक्षा और संतुष्टि धार्मिक खज़ानों में निवेश करने से आती है, न कि धार्मिक में। "अपने लिए धरती पर खज़ाना न जमा करो... परन्तु अपने लिए स्वर्ग में खज़ाना जमा करो... क्योंकि जहाँ तुम्हारा खज़ाना होगा, वहीं तुम्हारा दिल भी होगा।"

— मत्ती 6:19-21

जब ईश्वर हमारा सबसे बड़ा प्रेम बन जाता है, तो संसार हमें नियंत्रित करने की अपनी शक्ति खो देता है। जो कुछ भी हम कमाते या रखते हैं, उसका उपयोग और दान उनके राज्य को बनाने के लिए किया जाता है। यही है कि हम अपना खज़ाना स्वर्गीय बैंकों में कैसे जमा करते हैं।

संसार का प्रेम सूक्ष्म, प्रेरक और खतरनाक है, लेकिन यह ईश्वर के प्रेम से बड़ा नहीं है। ईश्वर का प्रेम क्षमा, उद्देश्य, शांति और अनंत जीवन प्रदान करता है—ऐसी चीज़ें जो संसार कभी नहीं दे सकता।

ईश्वर लोगों से प्रेम करता है, उन पापी प्रणाली से नहीं जो उन्हें गुलाम बनाती हैं। विश्वासियों के रूप में, हमें ईश्वर से पूरे दिल से प्रेम करने, संसार का उपयोग उसके स्वामित्व में आए बिना करने, और एक बड़े राज्य के गवाह के रूप में जीने के लिए बुलाया गया है।

ईश्वर से प्रेम करने का मतलब है अस्थायी के बजाय अनंत को, लोकप्रिय के बजाय पवित्र को, और देह को संतुष्ट करने वाले के बजाय ईश्वर को प्रसन्न करने वाले को चुनना। अगले दो अध्यायों में, हम सीखेंगे कि ईश्वर हमारे सारे प्रेम और ध्यान के क्यों हकदार हैं।

अध्याय १४ — ईश्वर और मनुष्य।

शुरुआत में, हमने अपने स्वर्गीय पिता के बारे में चार सरल लेकिन गहरी सच्चाइयाँ सीखीं:
ईश्वर प्रेम है। (1 यूहन्ना 4:8; 1 यूहन्ना 4:16)

वह शाश्वत रूप से ऐसे ही रहे हैं। (यशायाह 57:15, भजन संहिता 90:2; प्रकाश 1:8)

उनके मार्ग नहीं बदलते (इसका मतलब है वह नहीं बदलते)। (मलाकी 3:6; इब्रानियों 13:8)

उनके साथ कोई बदलाव नहीं है, और न ही मुड़ने की कोई छाया है। (इसका मतलब है वे थोड़ा भी नहीं बदलते) (याकूब 1:17)

मैं यह पुस्तक इसलिए लिख रहा हूँ ताकि मैं आपका ध्यान ईश्वर के उस एक सच पर आकर्षित करूँ जो पूरी तरह से अनदेखा रह जाता है। वह सच यह है क्योंकि पवित्र ग्रंथ का ईश्वर उपरोक्त सब कुछ है। वह पूरे ब्रह्मांड और उससे भी परे अनंत काल तक सबसे विश्वसनीय, धैर्यवान, कृपालु, दयालु, प्रेम करने वाले और गैर-न्यायाधीश व्यक्ति हैं। न केवल यह, बल्कि वह हमारे लिए एक साथ सब कुछ हैं। आइए मैं समझाता हूँ कि मैं क्या कहने की कोशिश कर रहा हूँ।

प्रेरित पौलुस द्वारा 1 कुरिन्थियों 13:4-7 में प्रेम के बारे में दिया गया चित्र, जैसा कि हम अब जानते हैं, ईश्वर के स्वभाव का वर्णन है। वे कहते हैं, "प्रेम धैर्यवान है, प्रेम कृपालु है" इस बारे में सोचिए: ईश्वर का धैर्य अनिच्छुक नहीं है, और उनकी कृपा सशर्त नहीं है। वे एक साथ हमारे प्रति कृपालु और धैर्यवान दोनों हैं। ईश्वर हमारा इंतज़ार करते हैं, हमारी कमज़ोरी को सहते हैं, और हमें नरमी से सुधारते हैं, कभी भी अपने धैर्य को अपनी कृपा से अलग नहीं करते।

हालाँकि, मनुष्य के रूप में, हमारे प्रयास कम पड़ते हैं। हम कृपालु होने की कोशिश कर सकते हैं, लेकिन हम जल्दी धैर्य खो देते हैं। या हम धैर्यवान होने की कोशिश करते हैं, फिर भी हमारे शब्दों और लहजे में कृपा की कमी होती है। हमारा प्रेम अक्सर बंटा हुआ, असंगत, और इस बात पर निर्भर करता है कि दूसरे हमारा व्यवहार कैसे करते हैं। ईश्वर का प्रेम कभी भी ऐसी असंतुलन से पीड़ित नहीं होता।

पौलुस आगे कहते हैं: "प्रेम ईर्ष्या नहीं करता" (1 कुरिन्थियों 13:4)। ईश्वर इसलिए ईर्ष्यालु नहीं हैं क्योंकि उन्हें किसी चीज़ की कमी नहीं है। वे दूसरों को आशीर्वाद देने में आनंद लेते हैं और हमारे भले की इच्छा रखते हैं। वे कहते हैं "क्योंकि मैं वे विचार जानता हूँ जो मैं तुम्हारे प्रति सोचता हूँ... शांति के विचार, और बुराई के नहीं" (यिर्मयाह 29:11)। हम मनुष्य, दूसरी ओर, ईर्ष्या से गहराई से जूझते हैं। जब जो लोग हमारा दुर्व्यवहार करते हैं, वे फलते-फूलते दिखाई देते हैं, तो हमारे दिल में रिसाव पैदा होता है। उनकी भलाई में आनंद लेने के बजाय, हम ईश्वर की न्यायपूर्णता पर सवाल उठाते हैं और ईर्ष्या को जड़ जमाने देते हैं।

पवित्र ग्रंथ हमें यह भी बताता है कि प्रेम (ईश्वर) "डींग नहीं मारता, नहीं फूलता" (1 कुरिन्थियों 13:4)। ईश्वर कभी डींग नहीं मारते, हालाँकि उन्हें अकेले महिमा का हर अधिकार है। उनकी महानता नम्रता और सेवा के माध्यम से व्यक्त होती है, जो सबसे स्पष्ट रूप से मसीह में दिखाई देती है। "वह धनी था, फिर भी तुम्हारे लिए वह गरीब बन गया" (2 कुरिन्थियों 8:9)। लेकिन हम मनुष्य, अक्सर तब डींग मारते हैं जब सफलता हमारे प्रयासों के माध्यम से आती है या जब दूसरे हमारी मदद के कारण लाभान्वित होते हैं। अहंकार जल्दी ही कृतज्ञता को बदल देता है।

पौलुस आगे कहते हैं कि प्रेम "अशिष्ट नहीं है, अपना ख्याल नहीं रखता, जल्दी गुस्सा नहीं होता, गलतियों का लेखा-जोखा नहीं रखता" (1 कुरिन्थियों 13:5)। ईश्वर कभी भी हमारे साथ अपने व्यवहार में कठोर या स्वार्थी नहीं होते। वे "क्रोध में धीमे और अटल प्रेम से परिपूर्ण" हैं (भजन संहिता 103:8)। जब हमारे साथ गलत होता है, तो हम हर अपराध को ध्यान से याद रखते हैं। इसके विपरीत, ईश्वर पूरी तरह क्षमा करते हैं: "मैं उनके पापों और उनके नियमहीन कार्यों को फिर से याद नहीं करूँगा" (इब्रानियों 10:17)।

शायद सबसे बड़ा अंतर यहाँ दिखाई देता है: "प्रेम अन्याय में आनंद नहीं करता, बल्कि सच में आनंद करता है" (1 कुरिन्थियों 13:6)। मनुष्य कभी-कभी तृप्ति महसूस करते हैं जब जो लोग हमें चोट पहुँचाते हैं, वे गिर जाते हैं। ईश्वर कभी भी बुराई में आनंद नहीं लेते, तब भी जब यह उनके खिलाफ किया जाता है। इसके बजाय, वे हमें उसी तरह प्रेम करने के लिए कहते हैं जैसे वे प्रेम करते हैं: "जो तुम्हें श्राप देते हैं, उन्हें आशीर्वाद दो... जो तुम्हारा दुर्व्यवहार करते हैं, उनके लिए प्रार्थना करो" (मत्ती 5:44)। जब हम उन लोगों के बारे में बुरा सोचते हैं जो हमारे धैर्य की परीक्षा करते हैं, तो ईश्वर उन लोगों को भी आशीर्वाद देता है जो उनका विरोध करते हैं।

अंत में, प्रेम "सब कुछ सहता है, सब कुछ पर विश्वास करता है, सब कुछ की आशा करता है, सब कुछ बर्दाश्त करता है" (1 कुरिन्थियों 13:7)। ईश्वर कभी भी अपने लोगों पर हार नहीं मानते। उनका प्रेम हमारी असफलताओं, हमारे संदेह और हमारे पापों से परे बना रहता है। मनुष्य के रूप में, हम थक जाते हैं, निराश हो जाते हैं, और छोड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं। ईश्वर वफ़ादार बने रहते हैं।

अंत में, एक बार फिर, मैं आपको याद दिलाना चाहूँगा कि क्योंकि ईश्वर अनंत काल तक और बिना बदले उपरोक्त चार बिंदु सब हैं, वह हमारे प्रति 1 कुरिन्थियों 13:4-8 में प्रेम के बारे में लगातार उल्लिखित सभी बातें हैं।

इस अध्याय में, हम स्पष्ट अंतर देखते हैं: ईश्वर पूर्णता में प्रेम हैं; मनुष्य टुकड़ों में प्रेम को प्रतिबिंबित करता है। फिर भी यह अंतर हमें दोषी ठहराने के लिए नहीं है, बल्कि हमें अपरिवर्तनीय स्वर्गीय पिता के करीब लाने के लिए है।

अध्याय १५ — ईश्वर और आप

यह अध्याय उस सबसे महत्वपूर्ण रिश्ते के बारे में है जिसे आप कभी भी रखेंगे: ईश्वर और आप ।

इससे पहले कि आपने कभी ईश्वर के बारे में सोचा, वे पहले से ही आपके बारे में सोच रहे थे । पवित्र ग्रंथ कहता है, “इससे पहले कि मैंने तुम्हें गर्भ में बनाया, मैंने तुम्हें जानता था” (यिर्मयाह 1:5)। आपका जीवन कोई दुर्घटना नहीं है । आप जाने जाते हैं, देखे जाते हैं, और ईश्वर द्वारा जानबूझकर बनाए गए हैं । वे आपके विचारों, आपके संघर्षों, आपके डरों, और आपकी आशाओं को जानते हैं । “हे प्रभु, आपने मुझे खोजा है और आप मुझे जानते हैं” (भजन संहिता 139:1)।

ईश्वर आपके प्रेम और ध्यान के हकदार हैं क्योंकि उन्होंने पहले आपको अपना प्रेम दिया । “हम इसलिए प्रेम करते हैं क्योंकि उसने पहले हमसे प्रेम किया” (1 यूहन्ना 4:19)। उनका प्रेम आपकी पूर्णता पर आधारित नहीं है, बल्कि उनकी कृपा पर । आपकी सबसे कमज़ोर अवस्था में भी, उन्होंने मुँह मोड़ा नहीं । “परन्तु ईश्वर ने इस बात में अपना प्रेम हमारे लिए दर्शाया: जब हम अभी भी पापी थे, तब मसीह हमारे लिए मरा” (रोमियों 5:8)।

ईश्वर दूर या उदासीन नहीं हैं । वे जीवन के हर दौर में आपके करीब हैं । “प्रभु टूटे हुए दिलों के करीब होता है” (भजन संहिता 34:18)। वे हर आँसू देखते हैं और हर अनकही प्रार्थना सुनते हैं । “अपनी सारी चिंता उस पर डाल दो क्योंकि वह तुम्हारी देखभाल करता है” (1 पतरस 5:7)। जब आप अकेले महसूस करते हैं, तो वे वफ़ादार बने रहते हैं ।

ईश्वर आपके सारे दिल का आह्वान करते हैं, इसलिए नहीं कि उन्हें इसकी ज़रूरत है, बल्कि इसलिए कि आपको उनकी ज़रूरत है । यीशु ने कहा, “अपने प्रभु ईश्वर से अपने सारे दिल, सारी आत्मा, और सारे मन से प्रेम करो” (मत्ती 22:37)। जब ईश्वर पहले होते हैं, तो बाकी सब कुछ अपनी सही जगह पाता है । “पहले ईश्वर का राज्य खोजो” (मत्ती 6:33)।

यदि आप कभी सवाल करते हैं कि क्या ईश्वर आपकी भक्ति के लायक हैं, तो क्रूस की ओर देखिए । वहाँ, प्रेम साबित हुआ । “क्योंकि ईश्वर ने संसार से इतना प्रेम किया कि उसने अपना एकमात्र पुत्र दिया” (यूहन्ना 3:16)। यीशु ने अपना जीवन दिया ताकि आपको क्षमा, आज्ञादी और अनंत जीवन मिल सके । “इससे बड़ा प्रेम किसी का नहीं कि कोई अपने मित्रों के लिए अपना जीवन दे” (यूहन्ना 15:13)।

ईश्वर आपके साथ एक रिश्ता चाहते हैं, खाली विश्वास नहीं । “ईश्वर के पास निकट आओ, और वह तुम्हारे पास निकट आएगा” (याकूब 4:8)। वे आपको अपने वर्तमान और भविष्य पर उन पर भरोसा करने के लिए आमंत्रित करते हैं । “अपने सारे दिल से प्रभु पर भरोसा करो” (भजन संहिता 3:5)। उनकी योजनाएँ अच्छी हैं, तब भी जब आप उन्हें नहीं देख सकते । “क्योंकि मैं उन योजनाओं को जानता हूँ जो मेरे पास तुम्हारे लिए हैं... तुम्हारे लिए आशा और भविष्य देने की योजनाएँ” (यिर्मयाह 29:11)।

जैसे-जैसे यह पुस्तक समाप्त होती है, निमंत्रण बना रहता है । ईश्वर आपके दिल के दरवाज़े पर खड़े हैं । “यदि कोई मेरी आवाज़ सुनता है और दरवाज़ा खोलता है, तो मैं अंदर आऊँगा” (प्रकाश 3:20)। वह आरंभ और अंत है, अल्फ़ और ओमेगा (प्रकाश 1:8), और फिर भी वे आपका नाम जानते हैं ।

ईश्वर आपके सारे प्रेम और ध्यान के हकदार हैं क्योंकि केवल उनमें ही आपकी आत्मा को विश्राम मिलेगा ।

“मेरी आत्मा को केवल ईश्वर में ही विश्राम मिलता है” (भजन संहिता 62:1)।

और यहीं से सब कुछ वास्तव में शुरू होता है।